अँग्रेज़ी शिक्षण*

एन.सी.ई.आर.टी.

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 के विकास की प्रक्रिया के दौरान गठित इक्कीस राष्ट्रीय फोकस समूहों ने स्कूली शिक्षा से जुड़े विविध मुद्दों जैसे – पाठ्यचर्या क्षेत्र, राष्ट्रीय चिंताएँ तथा व्यवस्थागत सुधारों पर विस्तार से विचार करते हुए आधार-पत्र लिखें। इन आधार-पत्रों में दी गई चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा तैयार की गई। एन.सी.ई.आर.टी. की ओर से समय-समय पर की जाने वाली बैठकों, गोष्ठियों, सेमिनारों, प्रशिक्षण एवं अभिविन्यास कार्यक्रमों में इन आधार-पत्रों पर चर्चा की जाती रही है।

इस अंक में 'अँग्रेज़ी शिक्षण' पर बने आधार पत्र में दी गई चर्चाओं को हम आपके साथ बाँटेंगें। इस आधार-पत्र में हमारे देश में अँग्रेज़ी भाषा शिक्षण से जुड़े अनेक मुद्दों पर विस्तार से चर्चा की गई है जैसे अँग्रेज़ी भाषा क्यों पढ़ाई जाए? स्कूलों में अँग्रेज़ी की शुरुआत किस स्तर से की जाए? अँग्रेज़ी भाषा की पाठ्यचर्या के लक्ष्य और स्वरूप क्या हों? इस पाठ्यचर्या का शिक्षण कैसे किया जाए और उसके लिए किस प्रकार के शिक्षक प्रशिक्षण की आवश्यकता होगी तथा अँग्रेज़ी भाषा में बच्चों का मूल्याँकन कैसे किया जाए आदि।

बहुभाषी देश में वैश्विक भाषा

अँग्रेज़ी क्यों?

भारत में अँग्रेज़ी आजकल आम लोगों के लिए शिक्षा में गुणवत्ता के प्रति उनकी आकाँक्षा तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय जीवन में पूर्ण भागीदारी का प्रतीक है। इसका औपनिवेशिक स्रोत अब भुलाया जा चुका है या अप्रासंगिक हो गया है। आजाद भारत में उच्च शिक्षा के लिए इसकी आरंभिक भूमिका (पुस्तकालयी भाषा, विश्व की रूपरेखा) जो उपयुक्त मानी गई थी, अब सामाजिक व भाषायी रूप से अपर्याप्त मानी जा रही है। अँग्रेज़ी की मौजूदा स्थिति विश्व मंच पर इसकी अत्यधिक उपस्थिति और राष्ट्रीय स्तर पर इसके असर से निर्धारित हुई है। एक अनुमान के अनुसार 2010 तक दुनिया की एक तिहाई आबादी अँग्रेज़ी सीखने वालों में शामिल हो जाएगी (ग्रेडौल

* राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 *अंग्रेजी शिक्षण* राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, एन.सी.ई.आर.टी. 2008, नई दिल्ली.

1997)।[1] 1990 में हमारी मुक्त अर्थव्यवस्था की शुरुआत से स्कूलों में अँग्रेज़ी की माँग का विस्फोट हुआ क्योंकि यह समझा जाने लगा है कि अँग्रेज़ी से अच्छे अवसर मिल सकेंगे (दास 2005)।

हमारे स्कूलों में अँग्रेज़ी

अँग्रेज़ी की शुरुआत का स्तर

अँग्रेज़ी की इस उपस्थिति का स्पष्ट प्रभाव यह है कि आज हर कोई स्कूल के शुरुआती स्तर पर इसकी माँग कर रहा है। अँग्रेज़ी पढ़ाने वाले पेशेवर लोगों ने लगातार यह सिफ़ारिश की है कि अँग्रेज़ी की पढ़ाई अपेक्षत: देर से (चौथी, पाँचवीं या छठी कक्षा से) ही शुरु होनी चाहिए और यही सोच नीति-पत्रों से भी जाहिर होती है। किंतु बड़े पैमाने पर खुल रहे अँग्रेज़ी माध्यम के निजी स्कूलों और सरकारी स्कूली तंत्र में अँग्रेज़ी की शुरुआत पहले किए जाने से इन नीतिगत स्कूलों और सरकारी स्कूली तंत्र में अँग्रेज़ी की शुरुआत पहले किए जाने से इन नीतिगत सिफ़ारिशों के प्रति असंतोष का स्पष्ट प्रमाण मिलता है।[2] इस व्यवस्था की असफलता के बाद भी लोकप्रिय माँग के कारण इस व्यवस्था को और नीचे ले जाया गया। अँग्रेज़ी की शुरुआत के स्तर पर मसला अब लोगों की आकाँक्षाओं के राजनैतिक प्रत्युत्तर का हो गया है और इसे शुरुआती स्तर से लागू करने के लाभ पर होने वाले अकादमिक विवाद को अप्रासंगिक करार दे दिया गया है। व्यवस्थागत अनुकूलता और तैयारी की कई समस्याएँ बनी हुई हैं जैसे कि योग्य शिक्षकों का अपेक्षित सँख्या में उपलब्ध न होना आदि। परंतु यह आशा की जाती है कि व्यवस्था को लोकप्रिय माँगों के अनुरूप चलना चाहिए उसके खिलाफ़ नहीं। इसीलिए हम इस सवाल पर कई तरीकों से विचार करेंगे। एक तो हमें आशा है कि बहुभाषिकता कई दुष्प्रभावों को दूर कर सकती है जैसे– अपनी भाषा के ह्रास या एकदम समझ न पाने की मुश्किल। दूसरे, हम यह बताएँगे कि जहाँ जरुरत है वहाँ सकारात्मक तरीके अपनाकर हम दी गई परिस्थितियों में ठोस रूप से क्या कुछ हासिल कर सकते हैं। इनका लक्ष्य बच्चे के लिए कक्षा में या उसके बाहर बोधगम्य सामग्री की उपलब्धता की व्यवस्था की पहचान करना है। शुरुआत से अँग्रेज़ी लागू करने की आम राय बनाने के लिए हमने विशेष अवधि या 'संवेदनशील समय' की प्राक्कल्पनाओं को शामिल किया है जो अँग्रेज़ी की बहुत पहले शुरुआत का समर्थन नहीं करती।

भारत में अँग्रेज़ी शिक्षण की विविधता व व्यापकता

आज भारत में अँग्रेज़ी सीखना-सिखाना, एक तरफ तो स्कूलों की विविधता और अँग्रेज़ी सीखने के लिए अनुकूल भाषायी माहौल तथा दूसरी तरफ महज परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए किसी पाठ्यपुस्तक को पढ़ाने की व्यापक कक्षा-प्रणालियों

[1] इस अनुमान में शामिल हैं प्राथमिक स्कूल के 15 करोड़ भारतीय बच्चे और इसी स्तर के 12 करोड़ चीनी बच्चे। यह एशिया की स्कूली व्यवस्था में अँग्रेज़ी के दखल का संकेत है। अँग्रेज़ी के लिए यह माँग सन् 2050 में पराकाष्ठा पर होगी और बहुत सारे लोग इसे सीख भी चुके होंगे। अरबी, चीनी, जर्मन, हिंदी व स्पेनिश भी भविष्य की भाषा के रूप में उभर चुकी होंगी।

[2] 2003 में किए गए एन.सी.ई.आर.टी. के शोध के अनुसार अँग्रेज़ी कक्षा 1 या कक्षा 3 से, 35 में से 26 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में लागू कर दी जाती है। केवल सात राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में यह कक्षा 4 या 5 से शुरु की जाती है।

की व्यवस्था के अर्थ में लिया जाता है। यह शिक्षकों की उन धारणाओं से तय होता है जो अँग्रेज़ी भाषा शिक्षण के पेशे में लिए गए तरह-तरह के अनुभवों से प्रभावित होती हैं।[3] अँग्रेज़ी शिक्षण की परिस्थितियों की मोटे तौर पर पहचान– (क) शिक्षक की अँग्रेज़ी भाषा में निपुणता (टी. पी.)* तथा (ख) विद्यार्थियों का स्कूल से बाहर अँग्रेज़ी से सामना अर्थात् भाषा-ग्रहण के परिवेश में अँग्रेज़ी की उपस्थिति (ई. ई.)**, से की जा सकती है (विद्यालयों के वर्गीकरण के इन आधारों का संदर्भ-नाग-अरुलमणि 2000)। अत: कुरियन (2005) नीचे दिए गए चार तरह के स्कूलों के उदाहरण देते हैं।

1. Ä Ä # टी.पी. Ä Ä # ई.ई. *(जैसे अँग्रेज़ी माध्यम के निजी/सरकारी सहायता प्राप्त संभ्रात स्कूल)* : निपुण शिक्षक, परिवेश में विभिन्न स्तरों की अँग्रेज़ी जिसमें घर में या पहली भाषा के तौर पर अँग्रेज़ी भी शामिल है।
2. Ä # टी.पी. Ä # ई.ई., *(जैसे नए अँग्रेज़ी माध्यम के निजी स्कूल जिनमें अधिकांश अँग्रेज़ी व अन्य भारतीय भाषाएँ दोनों का इस्तेमाल करते हैं)* : शिक्षक जिनकी सीमित निपुणता है, बच्चों की अँग्रेज़ी की पृष्ठभूमि कमजोर या नगण्य है और आम अभिभावकों में अँग्रेज़ी के सहारे उन्नति करने की आकांक्षा है।
3. Î # टी.पी. Î # ई.ई. *(जैसे सरकारी सहायता प्राप्त क्षेत्रीय भाषा माध्यम के स्कूल)*-जहाँ अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के साथ अँग्रेज़ी शिक्षण की प्रथा है। ये विभिन्न शैक्षिक समितियों द्वारा स्थापित, किए जाते हैं तथा यहाँ विभिन्न प्रकार की पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चे होते हैं।
4. Î Î# टी.पी., Î Î# ई.ई. *(जैसे सरकारी क्षेत्रीय भाषा माध्यम के स्कूल जो जिला या नगरपालिका शिक्षा विभागों द्वारा संचालित होते हैं)* : ग्रामीण भारत के बच्चों की बड़ी सँख्या इन्हीं में नामांकित होती है। शहरी गरीबों (जिनके अपने परिवेश में संभवत: अँग्रेज़ी *पाने* के थोड़े रास्ते हों) का भी एकमात्र विकल्प यही स्कूल हैं। चारों प्रकार के स्कूलों में अँग्रेज़ी में इनके शिक्षक ही सबसे कम निपुण होते हैं।

जहाँ ये उदाहरण, स्कूल प्रबंधन के प्रकार और शिक्षक की निपुणता व अँग्रेज़ी के परिवेश के *बीच* एक अपुष्ट अंतर्संबंध सुझाते हैं, वहीं इन स्कूलों में भी कई विभिन्नताएँ मिलती हैं। निजी अँग्रेज़ी माध्यम के स्कूलों में सीखने के अवसरों में विभिन्नताएँ हो सकती हैं और यह उनकी असमान भाषा प्राप्ति से जाहिर होता है। (नाग-अरुलमणि 2005)। जिन स्कूलों में कक्षा पुस्तकालय हैं, उनके बच्चे बेहतर ढंग से पढ़ते हैं बजाए उन बच्चों के जो मात्र उबाऊ पाठों और वर्तनी-जाँच तक सीमित रहते हैं। मैथ्यू (1997 :41) ने एक पाठ्यचर्या-कार्यान्वयन के अध्ययन में पाया कि केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी.बी.एस.ई.) से संबद्धताप्राप्त 2700 स्कूल प्रबंधन का तरीका, वित्तीय स्रोत, भौगोलिक स्थिति, वेतन संरचना, शिक्षकों की प्रेरणा व निपुणता, उनमें

[3]अँग्रेज़ी में किसी और विषय के बनिस्बत शिक्षण की मदद के लिए काफ़ी बेहतर संस्थागत व्यवस्था हो सकती है। (पर देखिए नोट 19, जो अँग्रेज़ी शिक्षा उद्योग और दूसरी भाषा के अधिग्रहण के बीच अंतर करता है)।

*टीचर प्रोफिशिएंसी-टी. पी.

**_इंग्लिश इन द एनवाइरनमेंट फॉर लैंग्वेज एक्वीजिशन_ - ई.ई.

आने वाले विद्यार्थी और उनके अभिभावकों की 'कोटियों' के आधार पर 'संस्कृति' में एक दूसरे से भिन्न थे। प्रभु (1987 : 3) ने यह सुझाव दिया कि 'शिक्षण परिस्थितियों के नामकरण को इसीलिए शैक्षणिक प्रस्तावों के औचित्य की सीमा की जाँच में सहायक के रूप में देखा जाना चाहिए' न कि संपूर्ण वर्गीकरण के लिए।

भारत में अँग्रेज़ी भाषा शिक्षण (इंग्लिश लैंग्वेज टीचिंग)

परंपरागत रूप से अँग्रेज़ी की पढ़ाई व्याकरण–अनुवाद पद्धति से होती थी। पाँचवें दशक के उत्तरार्द्ध में अँग्रेज़ी शिक्षण की सरकारी व्यवस्था में संरचनात्मक रूप से स्तरीकृत पाठ्यक्रम को लागू किया गया जो एक मुख्य नवाचारी कदम था (प्रभु 1987 : 10)। यह सोचा गया कि भाषा का शिक्षण उसकी सामग्री के नियोजन को व्यवस्थित करके किया जा सकता है जैसा कि अंकगणित या भौतिकी की पढ़ाई में किया जाता है। (कभी–कभी यह संरचनात्मक दृष्टिकोण सीधे लागू कर दिया जाता था जैसे कि मात्र अँग्रेज़ी भाषी कक्षाओं पर जोर देकर)। तथापि सातवें दशक के उत्तरार्द्ध में संरचनात्मक विधि के व्यवहारवादी–मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक आधारों ने भाषा को 'मानसिक अंग' समझने वाले चॉम्स्की के संज्ञानात्मक दावे को बढ़ावा दिया।[4]

अँग्रेज़ी शिक्षण पेशे के लोगों में भी संरचनात्मक विधि के प्रति असंतोष था क्योंकि यह विधि कक्षाओं में शुद्ध वाक्य बनाने की योग्यता के बावजूद शिक्षार्थियों की भाषा को वास्तविक परिस्थितियों में व्यवहार्य या बढ़ सकने की योग्यता नहीं दे पाती थी। यह बाद में समझ में आया कि कक्षाओं में प्रयोग किया जाने वाला संरचनात्मक दृष्टिकोण भाषा की संरचना और कुशलता जैसे दो खंडों में तोड़कर सोच में एक बिखराव और हल्कापन लाता था। भाषा की संरचना केंद्रित शिक्षा ने शिक्षार्थी की 'भाषायी उम्र' और 'मानसिक उम्र' के अंतर को इतना बढ़ा दिया कि मानस को भाषा से बाँधे रख पाना संभव नहीं हो पाता था।[5]

अत: अर्थपूर्ण संदर्भों में भाषा–प्रयोग सिखाने पर बल दिया जाने लगा। ब्रिटिश भाषाविदों का कहना है कि भाषा प्रयोग में व्याकरणिक दक्षता के अलावा कुछ और भी शामिल होता है। इस अतिरिक्त आयाम को बताने के लिए 'संप्रेषण दक्षता' पद का प्रयोग किया गया।[6] संप्रेषण दक्षता हासिल करने की कोशिश व्याकरणिक दक्षता के आधार पर ही हो सकती है। वस्तुत: संप्रेषण विधि पहली कोटि के स्कूलों में सबसे अधिक सफल रही जहाँ शिक्षक और शिक्षार्थियों में अपने भाषा–ज्ञान पर भरोसा होता है जो उन्हें विविध स्थितियों के

[4]चॉम्स्की ने ज्ञान और उसे सीखने के बीच दो तरह के आधारभूत भेद बताए हैं। पहला सचेत होकर सीखा जाने वाला ज्ञान, जो काफ़ी मेहनत और सहयोगशील प्रयास से धीरे–धीरे सांस्कृतिक रूप से रचा जाता है (जैसे कि वैज्ञानिक ज्ञान)। दूसरा, वह ज्ञान जो मनुष्य के मस्तिष्क में आने वाले अनुभवों के साथ स्वाभाविक रूप से उभरता प्रतीत होता है। यहाँ सीखे गए ज्ञान की जटिलता परिवेश के जरिए उपस्थित किए गए ज्ञान की तुलना में कहीं अधिक है। इस बेमेलपन को कभी–कभी 'प्लेटो समस्या' कहा जाता है।

[5]इसके अतिरिक्त बाद में पाया गया कि भाषा–सामग्रियों का योजनाबद्ध और व्यवस्थित प्रस्तुतीकरण सीखने वाले के आंतरिक शिक्षण क्रमों से मेल नहीं खाता था। प्रस्तुत और आत्मसात किए गए तंत्रों के बीच का संबंध रैखिक नहीं है। इसमें सीखने वाले के दिमागी व्याकरण का परोक्ष दखल काम करता है।

[6]यद्यपि ज्ञातव्य है कि चॉम्स्की जब 'दक्षता' पद का उपयोग करते हैं तो उसमें व्यवस्थाबद्धता (व्याकरणिकता) और स्वीकार्यता शामिल है। यह भाषा का विविध संदर्भों में सहजता और उपयुक्तता से प्रयोग करने की क्षमता को इंगित करता है।

अनुभवों से मिलता है। हालाँकि अधिकाँश शिक्षार्थियों के लिए 'संप्रेषण दक्षता' उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना भाषा में एक बुनियादी या मूलभूत दक्षता हासिल करना (प्रभु 1987 : 13)। सामग्री से समृद्ध सैद्धांतिक प्रविधियों (जैसे कि संपूर्ण भाषा, कार्य-आधारित और बोधगम्य सामग्री तथा संतुलित दृष्टिकोण) का लक्ष्य अर्थ-केंद्रित परिस्थितियों में भाषा का अनुभव दिलाना है ताकि भाषा-व्यवस्था की बनावट मस्तिष्क द्वारा ही संचालित हो।

भाषा पाठ्यचर्या के लक्ष्य

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या का लक्ष्य है–

- एक सुगठित पाठ्यचर्या नीति, जो भाषा शिक्षण और अर्जन के निर्देशक सिद्धांतों पर आधारित हो, जो स्थानीय जरुरतों और संसाधनों के अनुकूल विविध तरीकों को अपना सके तथा जो उपयोग के लिए व्याख्यात्मक मॉडल उपलब्ध कराए।

पाठ्यचर्या नवीकरण के पिछले प्रयासों पर विचार हमारे विवेचन में दुहराए जाने की समस्या खड़ी करता है। फिर भी हम आशा करते हैं कि भाषाविदों, मनोवैज्ञानिकों और अन्य संबंधित विषयों की मौजूदा अंतर्दृष्टि हमें पाठ्यचर्या संबंधी तौर-तरीके को बदलने व समृद्ध करने के लिए कारगर सुझावों का सैद्धांतिक आधार दे सकेगी।

अँग्रेज़ी केवल अपने बूते पर कायम नहीं रह सकती। इसे अपना स्थान पाना है।

- **अन्य भारतीय भाषाओं के साथ**

1. *क्षेत्रीय भाषा माध्यम के स्कूलों में*—बच्चों की अन्य भाषाएँ अँग्रेज़ी शिक्षा को कैसे मजबूत कर सकती हैं?
2. *अँग्रेज़ी माध्यम के स्कूलों में*—अँग्रेज़ी के वर्तमान वर्चस्व को घटाकर अन्य भारतीय भाषाओं का महत्त्व कैसे बढ़ाया जा सकता है?

दूसरे विषयों के साथ संबंध में

प्राथमिक शिक्षा में पूरी पाठ्यचर्या में भाषा का परिप्रेक्ष्य विशेष महत्त्व रखता है। विभिन्न अर्थपूर्ण संदर्भों के जरिये ही भाषा सबसे अच्छे तरीके से सीखी जा सकती है, इसीलिए हर प्रकार का शिक्षण एक अर्थ में भाषा शिक्षण ही है। यह प्ररिप्रेक्ष्य माध्यमिक शिक्षा के अमूर्त विचारों के संदर्भ में भाषा की केंद्रीयता को रेखांकित करता है। जहाँ शुरुआती स्तर पर संदर्भगत अर्थ भाषा-प्रयोग को बढ़ावा देते हैं वहीं बाद के स्तरों पर सिर्फ़ भाषा के जरिये ही अर्थ को पाया जा सकता है।

अँग्रेज़ी शिक्षण का उद्देश्य ऐसे बहुभाषियों को तैयार करना है जो हमारी सभी भाषाओं को समृद्ध कर सकें : यही स्वीकृत राष्ट्रीय नजरिया रहा है। यह बहुभाषी परिप्रेक्ष्य भाषा और संस्कृति के सरोकारों को और अज्ञात से ज्ञात की ओर जाने के शिक्षण सिद्धांत को भी संबोधित करता है।

कक्षा के बाहर और भीतर भाषा अर्जन

दूसरी भाषा का शिक्षण पाठ्यचर्या के किसी अन्य विषय के मुकाबले सार्वभौमिक सफलता की सबसे बड़ी कसौटी पर खरा उतरना चाहिए; यानी कम-से-कम दैनंदिन उद्देश्यों के लिए भाषा का सहज और उपयुक्त प्रयोग। इस उपलब्धि को अपनी भाषाओं में हर बच्चा स्कूल जाने से पहले पा लेता है (चॉम्स्की 1975)। यही वह 'निपुणता का न्यूनतम स्तर' है (जिसे अत्यंत जटिल मानसिक व्याकरण की आवश्यकता है, जिसके कारण 'वास्तविक समय' में भाषा का बोध और प्रयोग हो

पाता है) जिसकी सहायता से कोई आम आदमी महज परीक्षा पास करने या व्याकरण जानने के बजाए 'अँग्रेज़ी बोल सकने' की अपेक्षा रखता है।[7]

- अपने परिवेश की भाषा में बोलचाल की जो बुनियादी निपुणता कक्षा के बाहर भी बच्चा सहज रूप से हासिल कर लेता है, इस व्यापक उपलब्धि को क्या अँग्रेज़ी की कक्षाएँ भी अपना सकती हैं? अगर हाँ, तो कैसे?
- सीमित क्षेत्रों (जैसे — यात्रा एवं पर्यटन उद्योग) के लिए आवश्यक भाषा-कुशलताएँ इसी बुनियादी निपुणता पर टिकी होती हैं।

एक आम संज्ञानात्मक अकादमिक भाषायी दक्षता

आदर्श रूप से या सामान्यतया शिक्षा में भाषा ऐसी स्वाभाविक रूप से प्राप्त की गई भाषा-योग्यता से बनती है जो साक्षरता में विकास के जरिये इसे अमूर्त विचारों के उपकरण या अकादमिक ज्ञान के ग्रहण के लिए समृद्ध करती है। अब हम एक 'संज्ञानात्मक अकादमिक भाषायी दक्षता' की बात कर सकेंगे (देखें कमिंस 1979) जिसमें भाषा और सोचने का कौशल बच्चे के स्वाभाविक भाषा-ज्ञान के आधार पर निर्मित होता है। यही भाषा-शिक्षा और भाषा के जरिये शिक्षा का लक्ष्य रहा है। (अक्सर यह चर्चा मातृभाषा में भाषा-शिक्षा के संदर्भ में होती है।)

- इसके अलावा भाषाओं की ऐसी संज्ञानात्मक और अकादमिक कुशलताएँ सभी भाषाओं में संचारित हो सकती हैं, दूसरी भाषा में भी।

यह संचरणीयता ही उन आधारों में एक रही है जिसके कारण अँग्रेज़ी को अपेक्षाकृत देर से लागू करने की सिफारिश की जाती है। शिक्षा में भाषिक निपुणता जो बच्चे की अपनी भाषा में विकसित होती है, बाद में एक नयी भाषा में स्वाभाविक रूप से चली जाएगी। इस सिफारिश के प्रति असंतोष दो कारकों के कारण है–

(क) पहला, भाषाओं में अकादमिक भाषिक दक्षता का असंतोषजनक उपलब्धि स्तर, जैसे पढ़ने या लिखने में, के कारण दूसरी भाषा में अकादमिक बुनियाद नहीं बन पाती है। आँकड़े बताते हैं (नाग-अरुलमणि 2005) कि छोटे नगर के 40% बच्चे, जनजातीय इलाकों के 80% बच्चे और शहरी स्कूलों के 18% बच्चे प्राथमिक स्तर पर अपनी भाषा में नहीं पढ़ पाते हैं। ये कमियाँ बाद के स्तरों पर बढ़ती जाती हैं और सामान्य अकादमिक असफलता में बदल जाती हैं।

(ख) उच्च स्तरीय कौशल (जैसे– आनुमानिक समझ के साथ पढ़ना तथा अवधारणात्मक स्पष्टता के साथ लिखना) की बुनियाद के रूप में अँग्रेज़ी का सहज कामकाजी ज्ञान नहीं दे पाना।

प्रत्येक बच्चे के लिए तय की गई आठ वर्षों की शिक्षा गारंटी में लगभग चार वर्षों में ही अँग्रेज़ी भाषा संबंधी बुनियादी निपुणता बना सकना संभव होना चाहिए। इस निपुणता में पढ़ने और लिखने का बुनियादी साक्षरता कौशल भी शामिल हो। लेकिन इसके लिए हमारे स्कूलों को सभी भाषाओं के शिक्षण में और सफलता हासिल करनी होगी क्योंकि साक्षरता के कौशल संचरणीय होते हैं। इसके विकल्प

[7]सिर्फ़ शब्दों की सँख्या के मामले में, एचिसन 1998 अनुमान लगाते हैं कि एक घंटे की बातचीत में 5000 शब्दों की जरुरत होती है, और रेडियो वार्ता के लिए 9000 शब्दों की जरुरत होती है।

के रूप में यदि अँग्रेज़ी को काफ़ी शुरुआती स्तर से ही माध्यम बनाना है तो इसके शिक्षण से दूसरी भाषाओं की भी साक्षरता में सफलता को सुनिश्चित करना होगा जैसा कि वेस्ट (1941) ने दर्ज किया था।

पाठ्यचर्या का स्वरूप–संसाधन व प्रक्रियाएँ

सामग्री-समृद्ध परिवेश

भाषा सीखने के लिए सामग्री के साथ समृद्ध संप्रेषणात्मक परिवेश की आवश्यकता होती है। भाषाएँ अव्यक्त रूप से सीखी जाती हैं। सुनकर या पढ़कर पाए गए अर्थ से, सूचनाओं को समझने और संप्रेषित करने के जरिये। हम एक बोधगम्य सामग्री-समृद्ध पाठ्यचर्या का सुझाव देते हैं जिससे भाषा के सहज विकास की बुनियाद बन सके ताकि बोली और लिखी गई भाषा को समझना भाषा उत्पादन (व्याख्यान व लेखन) की पूर्वगामी भूमिका में हो। हम यह भी सुझाएँगे कि साक्षरता कैसे इस तरह की पाठ्यचर्या में अर्थपूर्ण ढंग से घुलमिल सकती है। हम पहले बता चुके हैं कि अँग्रेज़ी और अन्य स्कूली भाषाओं की साक्षरता में क्या अंतर्संबंध है इसीलिए इस खंड में बहुभाषिकता और पूरी पाठ्यचर्या में भाषा के दोहरे परिप्रेक्ष्यों का प्रकरण बार-बार आएगा।

कई शोधकर्ताओं (प्रभु 1987, क्रशेन 1985, एल्ली और मंगुभाई 1983) ने ज़ोर देकर कहा है कि भाषा तब सीखी जाती है जब ध्यान उसके रूप पर नहीं बल्कि संदेशों के अर्थ पर दिया जाता है। इस साझे विचार पर बँगलोर प्रोजेक्ट या कम्युनिकेशनल टीचिंग प्रोजेक्ट (प्रभु 1987), द कम्युनिकेटिव अप्रोच (विडोसन 1978), द नेचुरल अप्रोच (क्रशेन तथा टेरेल 1983) और पूर्ण भाषा आंदोलन जैसी नई खोजें हुई हैं। विशेष रूप से यदि साक्षरता ग्रहण के क्षेत्र को लें तो कई शोधकर्ताओं ने कौशल निर्देशों और भाषा सीखने संबंधी सबल अर्थपूर्ण परिवेश के संतुलन पर जोर दिया है (एडम्स 1990, स्नो, बर्नस एंड ग्रिफिन 1998; स्टेनोविक 2000)। साक्षरता विकास के लिए कौशल और अर्थ दोनों पर जोर दिए जाने की आवश्यकता है।

अर्थपूर्ण भाषा के अनुभवों की भूमिका या मस्तिष्क के कार्य करने के लिए 'सामग्री' की भूमिका को सीखने तथा भाषा सीखने के तमाम संज्ञानात्मक सिद्धांतों ने स्वीकार किया है (सीखने को आदत बनाना–बताने वाले व्यवहारवादी सिद्धांतों के समान ही)। 'भाषाओं का बोझ' पूरी शिक्षा के बोझ के समान ही एक तरह से नहीं समझ सकने का बोझ है। यह तब होता है जब भाषा को महज अपने लिए एक खास रूप या नियमों के तहत पढ़ाया जाता है, सुसंगत पाठों के अर्थ के वाहक के रूप में नहीं, यह महज पास करने के लिए अतिरिक्त विषय मात्र रह जाता है।[8]

भारत में अँग्रेजी-शिक्षा की विविधता और व्यापकता को देखते हुए प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार सीखने वाला अपनी उम्र के मुताबिक और भाषा के ज्ञान या भाषा कौशल की तैयारियों के मुताबिक

[8]जब भाषा को भाषा के रूप में नहीं पढ़ाया जाता तो वह मात्र अनुमान के जरिये सीखी जाती है। इसका पता अँग्रेज़ी माध्यम के स्कूलों की अपेक्षाकृत अधिक सफलता से चलता है। जहाँ अतिरिक्त अँग्रेज़ी की सामग्री (अँग्रेज़ी के सामाजिक अनुभवों के अलावा) अन्य विषयों की पढ़ाई से मिलती है। अक्सर इसका परिणाम इंडियनिज़्म' के अर्जन के रूप में होता है जिसे वस्तुत: अँग्रेज़ी कक्षाओं में हतोत्साहित किया जाता है। देखें शेल्टर्ड लैंग्वेज टीचिंग' कार्यक्रम (विषयों वाली कक्षाएँ दूसरी भाषा के विद्यार्थियों के लिए बोधगम्य बनाई जाती है–देखें क्रशेन 1987: 71)। बोधगम्य सामग्री और पाठ्यचर्या के लिए समान भाषा के नजरिए से भाषा-सीखने वालों और भाषा नहीं समझ पाने वालों की खाई को पाटा जा सकता है।

अर्थपूर्ण भाषा अर्जन करे। ऐसी सामग्री कम से कम कक्षाओं में तो मिलनी ही चाहिए परंतु सीखने वालों के अपने प्रयत्नों के द्वारा अन्य रूपों में भी उपलब्ध होनी चाहिए। सीखना कक्षा या शिक्षक तक ही सीमित नहीं होना चाहिए। सुविधावंचित शिक्षार्थियों के भाषा-परिवेश को विशेष तरीकों से समृद्ध करने की जरुरत है। इस लिहाज से कई नयी सफल खोजें और नवाचार इस देश में विद्यमान हैं जिन्हें उनकी तात्कालिक स्थानीय जरुरतों के परे ले जाकर व्यापक बनाने के लिए छानबीन और प्रोत्साहन की जरुरत है, जैसे अंत: क्रियात्मक रेडियो निर्देश, लक्ष्य आधारित संप्रेषण रवैया, पूर्ण भाषा आख्यान कार्यक्रम आदि। हम इन सफलताओं का वर्णन करने का प्रयास करेंगे।

शुरुआती स्तर पर अँग्रेज़ी

भाषा से परिचय– एक पूर्व-साक्षरता पाठ्यचर्या

अँग्रेज़ी चाहे जिस कक्षा से शुरू हो (I - III, या IV या V - VI) शुरुआती लक्ष्य (अँग्रेज़ी सीखने के पहले या दो सालों में) यह है कि–

सार्थक स्थितियों में अँग्रेज़ी के साथ पहचान बनाई जाए (मुख्यत: बोलचाल या लिखित और बोली हुई सामग्री द्वारा) ताकि बच्चे को भाषा का कामचलाऊ ज्ञान हो सके।

> *''अब तक भाषा सीखने के तमाम सफल अनुभवों की एक समान विशेषता यह रही है कि शिक्षार्थी को एक या अन्य तरीके से सीखी जाने वाली भाषा से परिचित कराया जाता है''* (रदरफोर्ड 1987 : 18)।

- यहाँ 'पर्याप्त आँकड़ों' से आशय है कि साल भर एक पाठ्यपुस्तक से चिपके रहना पर्याप्त नहीं है। *इसी सीमित सामग्री पर कुशल अधिकार हासिल करने की बजाए विविध और सार्थक भाषा-सामग्रियों से निरंतर परिचय कराते रहने पर जोर दिया जाना चाहिए।*
- इसका संबंध मूल्याँकन-विधि से भी है, जिसकी चर्चा आगे की जाएगी।

आजकल शीघ्र-साक्षर बनाने और लगाए गए पाठों के उत्तर कंठस्थ कराने पर जोर दिया जाता है। हमारा बल **साक्षरता-पूर्व पाठ्यचर्या** की जरुरत पर है।

हम 'व्यापक सामग्री' मुहैया कराने के सुझावों से शुरू करेंगे। इस सामग्री में पाठ्यपुस्तकें, अन्य मुद्रित सामग्री जैसे बड़ी किताबें, कक्षा पुस्तकालय, एक से अधिक भाषाओं में समांतर सामग्री और मीडिया सामग्री (सीखने वालों के लिए पत्रिकाएँ, अखबारों के स्तंभ, रेडियो/ऑडियो केसेट्स इत्यादि) तथा प्रामाणिक' और उपलब्ध सामग्री का इस्तेमाल शामिल है। शोध के अनुसार दूसरी भाषा सीखने की स्वाभाविक स्थितियों में किसी सीखने वाले द्वारा भाषा का उपयोग शुरु करने के प्रयास के पहले तीन महीनों की स्थिति 'मौन अवधि' होती है। इस अवधि में सीखने वालों को जो भी सामग्री उपलब्ध होती है, वह उसके शुरुआती उपयोग (चाहे वह कुछ शब्दों, वाक्यों के टुकड़ों और फार्मूलाकृत भाषा तक ही सीमित हो) के प्रयासों का आधार होती है। **इसीलिए कक्षा में भाषा की समझ और उसके अनुभवों की कीमत पर भाषा के शीघ्र उत्पादन पर बल नहीं दिया जाना चाहिए। भाषा की जाँच मातृभाषा, हाव-भाव या एक शब्द के उत्तरों से की जा सकती है।**

- कक्षा में शुरुआती उपयोग का किंचित् परिवर्तित तरीका बोधगम्य सामग्री के 'छद्म

उपयोग' का हो सकता है, कविताओं या तुकों को सीखकर, भाषा का सामान्य तौर पर प्रयोग और कक्षा व्यवस्था के फार्मूले को सीखकर अभिवादन या अनुरोधों को सीखने के जरिये। छद्म उपयोग की जरुरत संभवत: मौजूदा रटंत विधि को प्रेरित करती है। इसे पहचानकर और पाठ्यचर्या में इसे उचित स्थान देकर बाद में वास्तविक उपयोगी स्थान की ओर बढ़ा जा सकता है।[9]

- ड्रामा और नाटक का प्रदर्शन प्रामाणिक और बोधगम्य संदर्भों में छद्म-उपयोग का परम्परागत तरीका रहा है। हावभाव पूर्ण तुकबंदी, छोटे नाटक और झलकी, वास्तविक कक्षा गतिविधि के रूप में थियेटर से शुरुआत करना, भाषा से बच्चे के संबंध और प्रस्तुतीकरण को बढ़ावा दे सकता है। बाद के स्तरों पर यह (व्याकरण के साथ-साथ) अलंकार-शास्त्र के अध्ययन में विकसित हो सकता है।

शिक्षक-सामग्री को संपूरक व अनुपूरक बनाना

शिक्षक की स्वयं की भाषायी निपुणता की सीमित क्षमता बोधगम्य सामग्री के रूप में सत्त कक्षा प्रवचन को सीमित करती है। (कक्षा 1 के अँग्रेज़ी शिक्षकों की तैयारी की निराशापूर्ण तस्वीर के लिए देखें कृष्णन और पंडित, 2003) फिर भी, **शिक्षक की योग्यताओं को सामग्री के जरिये विकसित करने और पूरक बनाने के लिए कई रास्ते हैं।**

(क) अंत:क्रियात्मक रेडियो निर्देश (सी.एल.आर., पुणे)[10] जैसी परियोजनाएँ सुझाती हैं कि स्थानीय रेडियो बोधगम्य और दिलचस्प संदर्भों में सरल बोलचाल की भाषा मुहैया करा सकता है जो कि बच्चे की भाषा ग्रहण करने की क्षमता और शिक्षक की भाषायी निपुणता बढ़ाता है चाहे वह ग्रामीण संदर्भों में 'जहाँ अँग्रेज़ी विदेशी भाषा के तौर पर' कक्षा पाँच तक की, देरी से ही क्यों न शुरु की गई हो। भाषा का निरंतर और सत्त अनुभव तथा बोधगम्यता की नियमित प्रतिपुष्टि की आवश्यकता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

(ख) संपूर्ण भाषा दृष्टिकोण (जांगिड़, 2005)[11] के तहत कहानी पढ़ने को कक्षा-प्रणाली की तरह विकसित किया जाना चाहिए (बजाए कहानी को पाठ की तरह पढ़ाने के)। कहानियों को जोर से पढ़ना, दोहराकर पढ़ना, सामूहिक रूप से पढ़ना, कहानी फिर से बताने और फिर से लिखने की गतिविधियाँ शिक्षकों की मौजूदा भाषा-निपुणता और कौशलों को समृद्ध

[9] छद्म-उपयोग से हमारा तात्पर्य उस भाषा व्यवहार से है जो असल में होने वाली प्रक्रिया की नकल करती है। लेकिन वह सीखने वाले को जो पढ़ाया गया है उसकी सीमाओं से पार जाने की अनुमति नहीं देती है।

[10] सेंटर फॉर रिसोर्सेज (सी.एल.आर.), पुणे ने तीन वर्षीय संवादात्मक रेडियो कार्यक्रम 'हम अँग्रेज़ी सीखें' विकसित किया है। इसे ग्रामीण व शहर के भाषायी क्षेत्र के प्राथमिक स्कूलों में बोलचाल की अँग्रेज़ी सिखाने हेतु विकसित किया गया है। 15 मिनट का यह कार्यक्रम 250 भागों में बँटा हुआ है जो तीन अकादमिक वर्षों में संपन्न होता है। इस दौरान सीखने वालों से अपेक्षा की जाती है कि वे भागीदारी करें। सीखने वालों के सुनने और बोलने के हुनर पर इसका जो प्रभाव है वह चौकाने वाला है। इस कार्यक्रम का मराठी-अँग्रेज़ी संस्करण मुंबई और पुणे जिले में तथा हिन्दी-अँग्रेज़ी संस्करण दिल्ली, झारखंड और उत्तराखंड में ऑल इंडिया रेडियो द्वारा प्रसारित किया जा चुका है। इस कार्यक्रम से अँग्रेज़ी में रुचि रखने वाले युवा व बुजुर्ग श्रोता तथा लाखों की सँख्या में विद्यार्थी लाभान्वित हुए हैं।

[11] जांगिड़ (2005) ने लगातार एक साल तक कथा वाचन कार्यक्रम के दौरान पढ़ने, बोलने और लिखने में हासिल उपलब्धि का ब्योरा दिया है। इसमें पढ़ने की प्रविधि तथा इससे जुड़ी शिक्षक द्वारा की जाने वाली गतिविधि पर विस्तृत बातचीत है। साथ ही इसमें हरेक के लिए शिक्षण के यथेष्ट तर्क दिए गए हैं। इस अध्ययन में कक्षा 1 के लिए भाषा के जारी या रचनात्मक मूल्याँकन का भी अभिलेखन किया गया है।

व विकसित कर सकती हैं। नियमित रूप से कहानियाँ पढ़ने से बच्चों में, भाषा-अर्जन की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलेगा और बच्चों के साथ-साथ शिक्षकों में भी पढ़ने की आदत विकसित होगी। खोजे जाने वाले महत्त्वपूर्ण तरीके हैं–

1. बड़ी किताबों का सम्मिलित पाठ—बड़े आकार की दिलचस्प पुस्तकें जिनमें पाठ के साथ सुंदर चित्र भी हों, (स्पार्क इंडिया तथा प्रोमिस फाउंडेशन, बैंगलुरू की किताबों की तरह) समूह-पाठ के उपयोग में लाई जाती हैं जब शिक्षक पढ़ता है तो बच्चे पहले पढ़ी गई भाषा और चित्रों के द्वारा कहानी से परिचित होते हैं और धीरे-धीरे मुद्रित कोड से बच्चे का परिचय होता जाता है। (मध्यवर्गीय व उच्चवर्गीय परिवारों में बच्चों को कहानियाँ सुनाने का चलन जो कि एक ऐसी साक्षरता गतिविधि है जो साक्षरता के विकास को बढ़ावा देती है, सुविधावंचित परिस्थितियों में दोहराई जा सकती है।)
2. रीडिंग कार्डों का उपयोग (जैसा कि सी. आई.ई.एफ.एल. द्वारा बनाए गए अँग्रेज़ी 400 तथा अँग्रेज़ी 100 कार्ड्स) और कक्षा-पुस्तकालयों का प्रावधान। रीडिंग कार्ड के लघु स्तरीकृत अनुच्छेद (जो चार वाक्यों की कहानी से शुरु होते हैं)। प्रत्येक सीखने वाले को शिक्षक द्वारा शुरु कराए जाने के बाद स्वयं अपनी कठिनाई का स्तर तय करने और मौन पाठ (जो पढ़ने की आदत के विकास का सूचक है) की अपनी-गति को तय करने की छूट देते हैं।
3. 'बोलती किताबें' (केसेट्स + किताबें) शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों के उच्चारण और पढ़ाई का आदर्श तय करती हैं (सी.आई.ई.एफ. एल. के पास इस संबंध में कुछ अनुभव हैं)। यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ अभी बाजार नया होने के कारण निजी या व्यावसायिक प्रयास नहीं हो पा रहे हैं। अत: यहाँ सरकारी सहायता की जरुरत है। प्रभु (1987) ने एक 'कार्य-आधारित' प्रविधि का वर्णन किया है जो कक्षा में अर्थ समझाने के लिए बातचीत' और अर्थ 'केंद्रित गतिविधि ' की ओर ले जाती है।[12] इस भाषा-शिक्षण के लिए 'पाठ' शिक्षक का व्याख्यान होता है- शिक्षक कक्षा के लिए लगभग उसी तरह बोलता है जैसे कोई वयस्क किसी बच्चे से बात कर रहा हो (पूर्ववत् पृ. 57)। इसके लिए जहाँ शिक्षक में बुनियादी भाषायी

[12]बँगलोर मद्रास प्रोजेक्ट' या कम्युनिकेशनल टीचिंग प्रोजेक्ट काफ़ी महत्त्वपूर्ण पहल थी। इसमें सैद्धांतिक परिशुद्धता और अवधारणात्मक स्पष्टता तो थी ही साथ ही स्थानीय परिस्थितियों के लिए फायदेमंद कक्षा प्रणाली विकसित करने का समर्पण भी था। यह प्रयोग कर्नाटक और तमिलनाडु के सात क्षेत्रीय (भाषा) माध्यम स्कूलों की आठ कक्षाओं में (उनमें तीन निगम या सरकारी स्कूल शामिल थे) पाँच वर्षों तक चला। इसका उद्देश्य सीखने वालों को एक उपयोगी भाषा देना था जो व्याकरण की दृष्टि से भी सही हो। कक्षा में अभ्यास से जो प्रणाली विकसित हुई, उससे शिक्षण विशेषज्ञों के हाथ से निकल कर कक्षा शिक्षकों के हाथ में चला गया। टीम का प्रयास था कि कक्षा में ऐसी स्थिति पैदा की जाए जिसमें सीखने वाले में संवाद के लिए प्रयत्न करने का भाव उभरे, यानी समझना, किसी जगह पर पहुँचना, और अर्थ संप्रेषित करना।' कार्य के स्वरूप ने जो कि तर्किक-अंतराल गतिविधि पर आधारित था शिक्षक और सीखने वाले के सत्याभास के बोध को संतुष्ट किया। यह एक गंभीर अधिगम गतिविधि के रूप में प्रस्तुत किया गया (भाषा खेलों और भूमिका-निर्वाह के विपरीत) ; और अर्थ-केंद्रित कक्षा गतिविधि तथा अर्थ के स्पष्ट लेन-देन को एक स्पष्ट दिशानिर्देश में स्वीकृति दी गई। इन कार्यों की पूरी सूची प्रभु (1987) में दी गई है।

निपुणता आवश्यक है, वहीं यह ध्यान रहे कि यहाँ व्याकरण या साहित्य की विशेषज्ञता की जरुरत नहीं। (शिक्षक कैसी अँग्रेज़ी बोल सकते हैं इसके लिए देखें खंड 4.2 तथा प्रभु (पूर्ववत् पृ. 98)

ऐसे नजरियों और तरीकों को अलग-थलग नहीं रहना चाहिए बल्कि एक व्यापक संज्ञानात्मक दर्शन (जिसमें वॉयगोत्सिकी, चॉम्स्की तथा पियाजे के सिद्धांतों का समावेश हो) के तहत एक दूसरे के सहयोगी भाव में होना चाहिए। उदाहरण के लिए, भाषा के विकास के लिए बोधगम्य उत्पादन के साथ-साथ बोधगम्य सामग्री की आवश्यकता हो सकती है। सीखने वाले का व्याकरण ज्ञान जो मूलत: अव्यक्त बताया जाता है, अवसर आने पर या जरुरत पड़ने पर व्यक्त भी हो सकता है। पढ़ने के निर्देशों में ध्वनिक या संशोधित ध्वनिक नजरिये के साथ-साथ पूर्ण-शब्द दृष्टिकोण भी हो सकता है। जैसा हम आगे बताएँगे)। पाठ्यक्रम के उददेश्यों को कक्षा में लागू करने के लिए किन्हीं विशेष गतिविधियों (जैसे पढ़ने के लिए बच्चे की तैयारी की अवधारणा को ध्यान में रखा जाना चाहिए)। कक्षा कोई प्रयोगशाला नहीं है, अत: उसे सबको मिलाकर चलने वाला स्थान होना चाहिए जहाँ प्रत्येक व्यक्ति की सीखने की शैली का ध्यान रखा जाता हो।

उपलब्ध संज्ञानात्मक व भाषायी संसाधनों का उपयोग

कार्य-आधारित प्रविधि से एक महत्त्वपूर्ण अंतर्दृष्टि यह उभरती है कि हम कक्षा में –

'न सिर्फ़ लक्ष्य भाषा के संसाधनों को ही बल्कि सीखने वालों के पास उपलब्ध तमाम अन्य संसाधनों (इन पर हमें बल देना चाहिए) जैसे अटकलबाजी, हाव-भाव, प्रथाओं का ज्ञान, सँख्याओं का ज्ञान और मातृभाषा आदि को शामिल करने के लिए संवाद की आवश्यकता पैदा कर सकते हैं और करनी चाहिए' (प्रभु 1987 : 29)।

कक्षा 1 या कक्षा 4 के शिक्षार्थी भाषा में कच्चे हों पर संज्ञानात्मक रूप से वे शिक्षार्थी हैं, शिशु नहीं। उनकी (और उनके शिक्षकों की) मौजूदा संज्ञानात्मक व भाषायी योग्यताओं का उपयोग न कर पाने से हम एक संसाधन तो खो ही बैठते हैं साथ ही उस बच्चे को भी विमुख कर देते हैं जो नयी भाषा और अपने मानसिक संसार में कोई संबंध नहीं खोज पाता। भाषाओं के बीच और अन्य विषयों और भाषाओं के बीच के व्यवधान हटाने की हमारी सिफारिश के पीछे यही नजरिया है।[13]

साक्षरता की शुरुआत

डिकोडिंग—नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे

मुद्रण के साथ-साथ बोलचाल साक्षरता का एक महत्त्वपूर्ण रास्ता है। एक पूर्णतावादी या ऊपर से नीचे तक का दृष्टिकोण (कहानी पढ़ने के माध्यम से) जो पूर्ण शब्दों या भाषा के टुकड़ों की दृश्य पहचान विकसित करता है, के साथ-साथ मुद्रण पहचानना और विकोडीकरण तथा वर्ण-ध्वनि मानचित्रण (ये कुशलताएँ आजकल पढ़ने के साथ जुड़ी हैं) के नीचे से ऊपर तक के रवैये को

[13]प्रभु हमें बताते हैं (संदर्भ पहले वाला है)–... सीखने वालों के लिए कार्य आधारित शिक्षण में कोई बड़ी समस्या उभर कर नहीं आई है। एक छोटा सा लाभ भारतीय भाषाओं और स्कूली भाषा में अँग्रेज़ी के कुछ शब्दों की मौजूदगी से हुआ है। उनमें से कुछ तो सीखने वालों के पहले पाठों में भी शामिल है।' (इस परियोजना के समय तमिलनाडु में अँग्रेज़ी की शुरुआत कक्षा तीन और कर्नाटक में कक्षा पाँच से होती थी)।

जोड़ना होगा। तुक वाले वर्ण-समूहों (गोस्वामी 1999) के जरिये एक परिवर्तित ध्वनिक रवैया अपनाने से अँग्रेज़ी स्पेलिंग की मध्यस्थता को कम किया जा सकता है। (जैसे कि कैट, रैट, मैट, कार, फार, स्टार, बॉल, हॉल, कॉल में ए' वर्ण की ध्वनि की निरंतरता अथवा it/ ite, at/ate, ot/ote आदि वर्णों में स्वर — ध्वनियों के उच्चारण का अनुमान)। शॉ का प्रसिद्ध उदाहरण (Ghoti = fish) वर्ण-समूहों के शब्द में आक्षरिक स्थान के संदर्भहीन प्रयोग के कारण बना है (अँग्रेज़ी में शुरुआत में gh का उच्चारण कभी/फ/नहीं होता और जप की वर्तनी का उच्चारण/श/हमेशा जपवद के क्रम में होता है)। एडम्स (1990) ने इन मामलों का अच्छा परिचय दिया है। पूर्व-साक्षरता मौखिक गतिविधियाँ बच्चे में बोले और लिखे गए भाषा कोडों जैसे तुक, नाम या शब्दों में पहली ध्वनि की समानता आदि से संबंध बनाने की क्षमता को विकसित कर सकती है।[14]

एक मुद्रण-समृद्ध परिवेश

मुद्रण-समृद्ध परिवेश में कई साक्षरता पूर्व गतिविधि याँ की जा सकती हैं, कक्षा में संकेत चिह्न, चार्ट, कार्य व्यवस्था की सूचनाएँ लगी होनी चाहिए जैसा कि एक मध्यवर्गीय परिवार भी करता है (जिससे वहाँ के बच्चों को पहली पीढ़ी में सीखने आए बच्चों से तरजीह मिल जाती है)।

प्रतिमात्मक रूप से पहचानने के लिए वैज्ञानिक चिह्नों के रूप में जहाँ उपलब्ध हो, वहाँ शिक्षक परिवेशीय मुद्रणों' (नोटिस, साइनबोर्ड, लेबल आदि) की ओर ध्यान दिला सकता है—हर कक्षा या हर विद्यार्थी अपने लिए उदाहरण खुद चुन सकता है। प्रभु (1987) कक्षा 3 से 5 में आरंभिक साक्षरता-वर्धक संप्रेषणात्मक कार्यों में वर्णमाला के वर्णों से खाली चित्रों के ऊपर लेबल लगाने का काम सुझाते हैं। जांगिड़ (2005) दर्शाते हैं कि बच्चे (कक्षा 1 या 3) कहानियों के जरिये मुद्रण से परिचित होते हैं इससे बच्चों में पन्ने के स्थान क्रम विशेषत: केंद्र में शीर्षक, अनुच्छेद, नियमित क्षैतिज रेखाएँ आदि का बोध विकसित होता है।

पहले के अव्यवस्थित लेखन के मुकाबले श्रुतलेख भी आज संपूर्ण-भाषा-गतिविधि के रूप में देखा जाता है जिसमें बच्चे को पाठ के उदाहरणों को डिकोड कर अपनी स्मृति में रखने की आवश्यकता होती है जिन्हें वह लिखने के लिए पुनर्गठिन करता है (डेविस और रिनवोलुक्री 1988)।

व्यापक सामग्री के पोषण और सुपुर्दगी के लिए व्यवस्था

हम कुछ गतिविधियों व सामग्री का विस्तार से वर्णन कर चुके हैं जो शुरुआती दिनों में भाषा विकास को बढ़ावा देती हैं क्योंकि उनके अभाव में अँग्रेज़ी को आरंभ से लागू करने का उद्देश्य असफल हो जाएगा। यह खंड बहुभाषिकता, शिक्षक की तैयारी व मूल्याँकन के साथ-साथ उन स्कूलों में एक बुनियादी सकारात्मक हस्तक्षेपों की बात करता है जहाँ न तो शिक्षक निपुण है और न ही अँग्रेज़ी-ग्रहण करने के लिए पर्याप्त समर्थित परिवेश। व्यापक

[14] सीखने वाले द्वारा प्रयुक्त अँग्रेज़ी शब्द बच्चों के घर, पड़ोस और मीडिया से आते हैं, पूरी कक्षा के लिए संसाधन बन जाते हैं। नाग अरुलमणि आदि (2003) बताते हैं कि अँग्रेज़ी से जूझते कक्षा तीन के बच्चों के लिए विभिन्न ध्वनि खेलों से परिचय बच्चों की पढ़ाई पढ़ने, वर्तनी और शब्द संग्रह के विकास को बढ़ावा दे सकता है।

सामग्री की बच्चों तक सुपुर्दगी के तंत्रों को पहचानने का लक्ष्य होना चाहिए चाहे वे कक्षा में हों या बाहर; उदाहरणार्थ, बच्चों के लिए स्कूल छूटने के बाद सामुदायिक संसाधन केंद्र के रूप में स्कूल कार्य कर सकता है।

'उपचारात्मक शिक्षण' पर दिए जाने वाले मौजूदा बल को ऐसे सहायक हस्तक्षेप तक ले जाना चाहिए जो एक बुनियादी सफलता हासिल कर सकें। जब अधिकाँश बच्चों को 'उपचारात्मक शिक्षण' की जरुरत हो तो स्पष्ट है कि स्वयं तंत्र को इसकी जरुरत है। आजकल शिक्षकों और स्कूलों की आम शिकायत है कि बच्चों की घरेलू पृष्ठभूमि पर्याप्त सहायक नहीं है तो सुविधावंचित शिक्षार्थियों को आवश्यक समर्थन मुहैया कराने का दायित्व व्यवस्था का है।

बाद के स्तरों पर अँग्रेज़ी-उच्च स्तरीय कुशलताएँ

शब्द-संग्रह, पठन और साहित्य

शब्द-संग्रह, पठन और साहित्य संप्रेषण संबंधी योग्यता और दूसरी भाषा के ग्रहण और विकास के लिए अब शब्दकोशीय ज्ञान को केंद्रीय माना जाता है। यहाँ तक कि पहली भाषा में भी जहाँ भाषा का व्याकरण 10 वर्ष की उम्र तक बच्चा सीख जाता है, वहाँ शब्द-संग्रह करने का काम जीवनभर चलता रहता है।' (स्मिट, 2000 : 4)

आगे के स्तरों पर शब्द-संग्रह और लेखन का आधार समझ और रुचि के साथ की गई व्यापक पढ़ाई है। शब्द-भंडार के अर्जन को लेकर यह विवाद लगातार चलता है कि यह स्वाभाविक रूप से होता है या सिखाया जाता है। यह बहस इंगित करती है कि एक माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी के अकादमिक उद्देश्यों के लिए जिस विस्तृत शब्द-संग्रह[15] की आवश्यकता है।

उसे 'सब कुछ या कुछ नहीं' की शिक्षण विधि से नहीं बल्कि धीरे-धीरे क्रमबद्ध रूप से निर्मित करना होता है (देखें क्रेशन 1989, स्मिट 2000)। जब शुरुआती वर्षों में भाषा उचित रूप से पढ़ाई गई हो तो बाद के वर्षों में शिक्षार्थी कक्षा में थोड़ी मदद से ही ये उच्चस्तरीय कुशलताएँ स्वतंत्र रूप से स्वभावत: अर्जित कर लेता है। शोध यह भी बताते हैं कि जब भाषा शिक्षण में पारंपरिक तरीकों से हटकर, जहाँ शब्दों के अर्थ सिखाए जाते हैं (शब्दकोश का तरीका), एक समृद्ध तरीका अपनाया गया, जहाँ शब्द का दूसरे शब्दों और संदर्भों से संबंध बताया गया (विश्वकोश का तरीका), तो अधिक कारगर नतीजे सामने आए (फॉसेट और निकलसन, 1991, स्नो आदि, 1991)।

कक्षा-पुस्तकालयों में उपयोग में लाई गई या उपलब्ध सामग्री मुद्रित या मल्टीमीडिया रूपों में हो सकती है। बच्चों का परिचय इन सभी रूपों से होना चाहिए। वैसे तो सभी स्तरों पर, सामग्री को समानता (लिंग और सामाजिक) और सौहार्द्रता (मनुष्यों के बीच, मनुष्य और प्रकृति के बीच) के प्रति संवेदनशील होना चाहिए पर खासतौर से इस स्तर पर जहाँ बड़ी मात्रा में स्वतंत्र अध्ययन

[15] एक 20 वर्षीय विश्वविद्यालयी विद्यार्थी को अँग्रेज़ी माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने के लिए कम से कम 20,000 'शब्द परिवारों' (एक शब्द के अन्य रूप और उससे निकले रूपों के साथ) को जानना जरूरी है। यह मानकर चला जाता है कि किसी 17 वर्षीय लड़के को विश्वविद्यालयी शिक्षा के लिए तैयार होने के लिए 15000 से 17000 शब्द परिवारों से परिचित होना चाहिए यदि वह प्रति वर्ष 1000 नए शब्द सीखने की सामर्थ्य रखता हो।

अपेक्षित होता है (वर्ष भर में कम से कम 6 पाठ), उन समूहों में जहाँ शिक्षकों और विद्यार्थियों की योग्यता उपलब्ध हो, भाषा के प्रति लिंग बोधपरक सजगता पैदा की जा सकती है। यह पाठ्यचर्या-पर्यवेक्षण नजरिया भाषा-प्रयोग संबंधी खोज का आदर्श क्षेत्र है।

परंपरागत रूप से शुरुआती स्तर के बाद भाषा सीखने की सामग्री का स्रोत साहित्यिक गद्य; कथा-साहित्य और कविता होते हैं। जहाँ व्यापक क्षेत्र के अधिक, समसामायिक और प्रामाणिक पाठों को शामिल करने का चलन बढ़ा है (भाषा-पाठ्यचर्या को व्यावहारिक दिशा देने के लिए तथा साहित्य की व्यापक परिभाषा बना पाने के लिए भी), अभी भी पहुँच के अंदर तथा सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त साहित्य अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका जारी रखे हुए है; ज्यादातर बच्चे अँग्रेज़ी कक्षा को कहानियाँ पढ़ने की जगह मानते हैं। कल्पनाशीलता के विकास के लिए भाषा का उपयोग बाद के भाषा अध्ययन का प्रमुख लक्ष्य रहा है। पाठ्यचर्या में अँग्रेज़ी के साहित्य के वैकल्पिक अध्ययन का अलग से प्रावधान किया जा सकता है—ब्रिटिश, अमरीकी और भारतीय, कॉमनवेल्थ और यूरोपीय आदि साहित्य के अनुवादों के रूप में। साथ ही इसके जहाँ आवश्यक हो वहाँ विशेष उद्देश्यों के लिए अँग्रेज़ी को भी अपनाया जा सकता है। (भाषा के फार्मूलाबद्ध प्रयोगों, जैसा कि पर्यटकों की पुस्तिका में होता है, के लिए भाषा के व्यवस्थित और सहज ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। अतएव हम अपने कार्यक्षेत्र में उस पर विचार नहीं कर रहे)। ये नजरिये पूर्व स्नातक स्तर पर अँग्रेज़ी के अध्ययन की विशेषज्ञता के आधार बनेंगे।

भाषा और आलोचनात्मक चिंतन–संदर्भ कौशल, व्याकरण और साहित्यशास्त्र

बाद के स्तरों पर विद्यार्थियों को कुछ विश्वसनीय कार्यों के द्वारा लिखने से परिचित कराया जा सकता है। जैसे उनके इलाके के किसी ऐसे व्यक्ति के लिए पत्र लिखना जिसे लिपिक की जरुरत हो या दूसरे बच्चों से पत्र-व्यवहार (हम इस गतिविधि को बढ़ाने के लिए अंतर-स्कूलीय कार्यक्रम के बारे में सोच सकते हैं) या उन लोगों को साथ मिला सकते हैं जो स्वयं विद्यार्थियों से पत्र-व्यवहार करना चाहें। इसमें अध्ययन के जिन कौशलों पर बल होना चाहिए वे हैं—नोट लेना, नोट बनाना, उद्धरण कौशल, बोलने या लिखने संबंधी संप्रेषण कौशल। सभा में भाषण देना, साक्षात्कार व वाद-विवाद के बजाए निबंध या घिसे-पीटे विषयों पर लेखन के मशहूर भाषणों से परिचय कराते हुए उनके तर्कों की संरचना (भावनात्मक या तार्किक) का विश्लेषण किया जा सकता है।

बुनियादी भाषायी निपुणता हासिल करने के बाद व्याकरण से परिचय कराया जा सकता है अर्थात् व्याकरण अकादमिक भाषा पर विचार करने या स्वयं अपने में बौद्धिक रूप से दिलचस्प गतिविधि के रूप में आए। शब्दकोशीय प्रविष्टियों के अर्थपूर्ण उपयोग की योग्यता के लिए व्याकरण का थोड़ा ज्ञान तो किसी भी हालात में अत्यंत आवश्यक होता है क्योंकि सीखने वालों के लिए शब्दकोश में अब व्याकरण' काफ़ी मात्रा में उपयोगी टिप्पणियों और उनकी कोडिंग के रूप में रहता है। व्याकरण

भाषा का प्राथमिक या व्यावहारिक ज्ञान पाने का रास्ता नहीं है।[16] बल्कि भाषा क्षमता को बढ़ाने और पाठ की साहित्यिक' और तर्कात्मक संरचना की समझ के लिए व्याकरण आवश्यक है।

कुछ शिक्षकों का यह दुराग्रह रहा है कि व्याकरण भाषा की 'शुद्धता' (प्रवाह के विपरीत) के लिए अत्यावश्यक है। वे यह सोचते हैं कि विद्यार्थी भाषा का इतना अनुभव प्राप्त कर चुके हैं कि वे उसे सामान्य गलतियों को पहचानते हुए पर्याप्त व्यवस्था के साथ कर सकते हैं।

अँग्रेज़ी की कक्षा या स्कूल में बहुभाषिकता क्षेत्रीय भाषा के परिप्रेक्ष्य में

वर्तमान में अँग्रेज़ी कक्षा में मातृभाषा का प्रवेश गुप्त घुसपैठिए के रूप में होता है, उत्तर लिखाते समय शिक्षक पाठ के साथ-साथ अनुवाद और व्याख्या' करता चलता है और उसे बहस करके और समझ बनाने के क्रम में उपयोग में लाकर या अँग्रेज़ी से संबंधित करके सही जगह दी जा सकती है। प्रभु (1987) इसका एक उदाहरण देते हैं-बँगलोर प्रोजेक्ट में मातृभाषा के प्रयोग की सीमा कार्य की जरुरतों से सहज ही तय हो गई थी जहाँ सामग्री अँग्रेज़ी में थी और जवाब भी अँग्रेज़ी में ही आते थे। मातृभाषा ने ही आवश्यकता पड़ने पर अँग्रेज़ी भाषा को बोधगम्य बनाया। यदि अँग्रेज़ी में विविध प्रकार की सामग्री उपलब्ध हो और उसे समझने का सच्चा प्रयास हो तो मातृभाषा दखलंदाजी नहीं करती बल्कि सहायक होती है। क्रेशन (1985:94) बताते हैं कि ''साथ-साथ किया जाने वाला अनुवाद प्रभावी नहीं होता'', कक्षा में दो भाषाओं का उपयोग इस प्रकार किया जा सकता है कि पहली भाषा का पृष्ठभूमि में उपयोग करते हुए लक्ष्य-भाषा की सामग्री को बोधगम्य बनाया जाए।

अँग्रेज़ी भाषा-शिक्षण के साधन तैयार करने में मातृभाषा के उपर्युक्त प्रयोगों की समझ बनाने में शिक्षकों की भागीदारी निर्मित करने की जरुरत है। भाषा-मिश्रण के उपर्युक्त स्तर क्या हो सकते हैं, इस विषय पर शिक्षकों की मानसिकता को संबोधित करने की जरुरत है। कुछ संभावनाएँ हैं -

(अ) **प्राथमिक स्कूलों में भाषाओं के बीच तथा 'भाषाओं और विषयों' के बीच के व्यवधान हटाना**—निम्न प्राथमिक स्तर पर या कम से कम कक्षा 1 से 3 तक जो गतिविधियाँ बच्चे को अपने आसपास के जगत के प्रति जागरूक करने के लिए होती हैं, वे अँग्रेज़ी मातृभाषाओं के साथ-साथ आ सकती हैं (दास 2005)। इस प्रकार की बहुभाषी गतिविधियों के विकास के लिए सामग्री तैयार करने और शिक्षकों के सहयोग से एक स्पष्ट प्रविधि के निर्देश तैयार करने की जरुरत है जिसमें एक से अधिक भाषाओं का स्वाभाविक प्रयोग हो सके। भाषायी शुद्धतावाद चाहे अंग्रेजी का हो या भारतीय भाषाओं का, उसमें

[16] व्याकरण जैसे पद को कई तरीकों से समझने की जरुरत है। यहाँ हम पद व्याख्या के कौशल या रणनीति (ऐसे भाव समूहों की पहचान करें ताकि उनको वाक्य में ठीक जगह पर रखा जा सके, या वाक्य के विस्तार के लिए उनका इस्तेमाल करना) को खारिज नहीं कर रहे हैं, शुरुआती स्तर पर निवेशों को अधिक बोधगम्य बनाने के साधन के रूप में, विशेष रूप में अँग्रेज़ी वाले परिवेश में। कुछ व्याकरण (जैसे प्रीपोजीशन का उपयुक्त प्रयोग) की पहचान शब्द-संग्रह (इस पद के तहत शामिल है मुहावरेदार और निश्चित अभिव्यक्तियाँ, जैसे इन टाइम, ऑन टाइम) जैसे सटीक पद को सीखने के रूप में की जा सकती है।

कोड-परिवर्तन या कोड-मिश्रण की उदारता होनी चाहिए।

(ब) **एक से अधिक भाषाओं में समांतर पाठ लागू करना–**यह एक ही कहानी भी हो सकती है जैसी एन.बी.टी. ने अँग्रेज़ी के साथ-साथ भारतीय भाषाओं में भी कहानियाँ छापी हैं (देखें अमृतावल्ली और रामेश्वर राव, 2001)। प्रॉमिस फाउंडेशन ने चार भारतीय भाषाओं और अँग्रेज़ी में बड़ी पुस्तकें तैयार कराई हैं, सी.आई.ई.एफ.एल. की संपूर्ण भाषा दृष्टिकोण के तहत द्विभाषी किताबें हैं। ऐसे समांतर पाठ एक दूसरे के यथावत अनुवाद हों ऐसा जरूरी नहीं है पर वे समान अर्थ वाले हों और उनमें एक जैसी भाषिक गतिविधि जैसे — तुक, ध्वनि-खेल आदि शामिल हों ताकि बच्चे भाषा-ध्वनि संरचना के प्रति सचेत हों। ***पढ़ना एक संचरणीय कुशलता है–*** एक भाषा में पढ़ने से पढ़ने की कुशलता सामान्य रूप से बढ़ती है (वेस्ट 1914)। यह सिर्फ़ समान लिपि वाली भाषाओं में नहीं बल्कि अलग लिपियों वाली भाषाओं में भी कारगर होता है। (वेस्ट ने बँगाली और अँग्रेज़ी पर काम किया है : दो लिपियों की स्थितियों और पढ़ने की संचरणीयता के बारे में अब थोड़ी बहुत जानकारी है)।

(स) विद्यार्थियों के साथ त्रुटिपूर्ण अँग्रेजी की अभिव्यक्ति के अर्थ की पुनर्रचना के लिए जानी-पहचानी भाषा का उपयोग (फोकस समूह की एक चर्चा में डॉ. चंपा टिक्कू की प्रस्तुति)।

(द) जबकि ऊपर दिए गए सुझाव समांतर या साथ-साथ काम करने वाली भाषाओं के बारे में हैं, वहीं द्विभाषी पढ़ने-पढ़ाने वाले के लिए या मिश्रित कोड के द्विभाषी पाठों पर भी प्रयोगात्मक कार्य उपलब्ध हैं (देखें डोवेरा 2005, फेलिक्स 1998)। इनकी शैक्षणिक संभावनाओं को खोजा जा सकता है।

(य) राज्य को विभिन्न स्तर के लिए **सीखने वालों के द्विभाषी शब्दकोशों** के प्रकाशन की पहल करनी चाहिए क्योंकि इसका बाजार नहीं होने के कारण स्तरीय व्यावसायिक पहल इस क्षेत्र में नहीं हुई। अँग्रेज़ी/फ्रांसीसी/स्पेनी/इतालवी/जापानी संदर्भों के ऐसे शब्दकोश उपलब्ध हैं जो द्विभाषिकता और द्विसाक्षरता को बढ़ावा देंगे और सामग्री को समझने तथा स्वतंत्रता से पढ़ने को बढ़ावा देंगे।

(र) एक अन्य द्विभाषी मॉडल है जिसमें अपरिचित भाषा की सामग्री लेकर परिचित भाषा में उसका प्रयोग होता है जैसा कि कभी-कभी (अँग्रेज़ी माध्यम) विश्वविद्यालय ***पढ़ना एक संचरणीय कुशलता है*** —के विद्यार्थियों द्वारा अपनी भाषा में उत्तर देने के आग्रह में झलकता है। (कुछ विश्वविद्यालय इसे मान लेते हैं)। यह भी ध्यान देने योग्य है कि ब्रिटिश स्कूलों में फ्रांसीसी पाठ के अध्यापन में उत्तर अँग्रेज़ी में दिए होते हैं।

यद्यपि ये सभी सुझाव तुरंत उपयोग में नहीं लाए जा सकते हैं, फिर भी इनसे पता चलता है कि विविध संदर्भों के लिए कई विकल्प उपलब्ध हैं। ये अँग्रेज़ी पाठ्यचर्या को हलका बनाने' के प्रयास नहीं हैं बल्कि वस्तु-स्थिति

और जरुरतों को अँग्रेज़ी की सुपुर्दगी की व्यवस्थाओं के चुनाव के साथ जोड़ने का प्रयास है (पाठ्यपुस्तकों का खंड भी देखें)।

अँग्रेज़ी माध्यम का संदर्भ

किसी संभ्रांत शहरी बच्चे को अँग्रेज़ी के अलावा कोई दूसरी भाषा में कामकाज करना या सिखाना एक गंभीर चुनौती है। एक मौजूदा मॉडल है कुछ विषयों (जैसे समाज विज्ञान) को गैर अँग्रेज़ी भाषा में पढ़ाने का (चर्चा के लिए देखें, अमृतावल्ली, 2001)। अँग्रेज़ी की कक्षा में अब अँग्रेज़ी में भारतीय लेखन के पाठों (कथा साहित्य या गैर कथा साहित्य) के साथ-साथ भारतीय भाषाओं से अनुवादित पाठ मिल जाते हैं।

परंतु अँग्रेज़ी व अन्य भारतीय भाषाओं के बीच संवाद को इससे आगे ले जाने की जरुरत है। उदाहरण के लिए वैसे तरीके खोजने की जरुरत है जिससे मूल भाषा और अँग्रेज़ी अनुवाद के समांतर पाठ पढ़े जाएँ। मूलत: अँग्रेज़ी और अन्य भारतीय भाषाओं के शिक्षकों में इस पर सहमति होनी चाहिए कि अकादमिक भाषायी गतिविधि क्या है और इसे दैनिक जीवन में किस तरह शामिल किया जा सकता है। ऐसे पत्र-पत्रिकाएँ उपलब्ध हैं जो समांतर भाषायी संस्करण निकालते हैं (वस्तुत: चंदामामा और अमर चित्रकथा का अँग्रेज़ी के साथ भारतीय भाषाओं में प्रकाशन का इतिहास रहा है)। टेलीविजन पर भी समांतर भाषा चैनल हैं। ऐसे पेशेवर लोगों की पर्याप्त सँख्या उपलब्ध है जो एक से अधिक भाषाओं में काम करते हैं। इन संसाधनों को कक्षाओं में प्राथमिक स्तर और विशेष रूप से माध्यमिक स्तर पर प्रवेश मिलना चाहिए।

पाठ्यपुस्तकें

इन सबका निहितार्थ है कि कक्षा में उपयोग किए जाने वाले पाठों, जिसमें पाठ्यपुस्तकें भी शामिल है, पर शिक्षक और शिक्षार्थियों का अधिक से अधिक अधिकार हो जाए। सिर्फ़ एक निर्धारित पाठ से पाठ्यचर्या संबंधी स्वतंत्रता नहीं आ सकती। पहले की तरह उपलब्ध पाठों के समूह में से एक चुन लेने के तरीके को फिर अपनाया जा सकता है—उड़ीसा जैसे कुछ राज्यों में रीडिंग कार्ड के विचार के समान ही नयी तरह की पाठ्यपुस्तकें शुरु की गई हैं जिनमें एक ही पीरियड में खत्म किए जा सकने वाली छोटी इकाइयाँ होती हैं (सुनवानी 2005)। भाषा को एक गतिशील पाठ के रूप में देखा जाना चाहिए, यानी बार-बार एक ही पाठ को दोहराते रहने के बजाए रोज-रोज नयी घटनाओं की तुलनीय भाषा का परिचय कराया जाना चाहिए (अमृतावल्ली, (1999)। इसकी तुलना भारतीय शास्त्रीय संगीत में राग के सीखने की विधि से की जा सकती है।) यह बच्चे को 'अपठित' बोधगम्य उदाहरणों की परीक्षा के लिए तैयार करेगा। शिक्षक और विद्यार्थियों को अपने स्तर के अनुरूप पूर्ण निर्धारित और अनिर्धारित पाठों के संतुलन को विकसित करना होगा।

शिक्षार्थी द्वारा चयनित पाठ

शिक्षार्थियों द्वारा चुने गए पाठों के उपयोग पर आंरभिक शोध हुए हैं (कुमार दास 1993)। इन पाठों में आलेख, पुस्तकें और अनुच्छेद, चुटकुले या कार्टून जैसी छोटी चीजें आती हैं जिन्हें शिक्षार्थी अपनी कक्षा में औरों को सुनाने के लिए लाते हैं। उपर्युक्त सामग्री की खोज के लिए शिक्षार्थियों को

प्रोत्साहित करने से उनमें व्यापक रुप से पढ़ने की प्रेरणा बढ़ती जाती है। यह कक्षा को 'प्रामाणिक' सामग्री की तरफ़ भी ले जाता है जो अब तक व्यवस्था के द्वारा उपेक्षित संसाधन रहा है। ई.एल.टी. के साहित्य में ऐसी सामग्री के उपयोग पर व्यापक चर्चाएँ मिलती हैं। एक शिक्षक ने लिखा है कि डाकखाने या रेलवे-स्टेशन तक विद्यार्थियों को ले जाने से उन्हें अँग्रेज़ी के 'पाठों' के नमूने चुनने का अवसर मिला। वरिष्ठ शिक्षार्थियों के लिए रेडियो, प्रकाशित सामग्री या टेलीविजन समाचार या समाचार फीचरों का उपयोग किया जा सकता है (जैसा कि सी.आई.ई.एफ.एल. द्वारा किए गए शोध का सुझाव है)।

निर्धारित पाठों के साथ आने वाली 'कुंजियाँ या गाइडें' एक समस्या बन गई हैं। इस रिवाज़ की भर्त्सना करने के बजाए हमें यह सोचना चाहिए कि आखिर कुंजियाँ होती क्यों हैं? वे स्थानीय (शिक्षक/शिक्षार्थी) योग्यताओं और केंद्रीकृत व्यवस्था की अपेक्षाओं (परीक्षाएँ/निर्धारित पाठ) के बीच की खाई को भरती हैं। 'सरल' पाठ और 'सरलीकृत' पाठ के बीच फ़र्क करना उपयोगी हो सकता है। उदाहरण के लिए, त्तिलियों पर किसी विज्ञान की किताब में लेख की तुलना किसी अखबारी स्तंभ में प्रकाशित त्तिलियों पर लेख के साथ या बड़े लोगों के लिए किसी विश्वकोश में इस विषय की प्रविष्टि के साथ और फिर बच्चों की किताब में त्तिलियों पर किसी लेख के साथ की जाए तो पता लगता है कि ये सब भाषा के लिहाज से ही भिन्न नहीं बल्कि अपनी सूचना-संरचना में भी भिन्न हैं। जिन पुस्तकों की सूचना-संरचना को कुंजियों की जरुरत पड़ती है, उनकी जाँच करनी चाहिए।

अधिकाधिक रचनात्मक पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध करवाने का माहौल बनाना चाहिए। अधिक उम्र के सीखने वालों के लिए कल्पनाशील तरीके से सरल अँग्रेज़ी में लिखी गई पुस्तकों का अकाल है। भारत में निजी क्षेत्र व सार्वजनिक क्षेत्र दोनों जगह बच्चों के लिए लिखा गया रचनात्मक साहित्य व्यापक रूप में उपलब्ध है पर विभिन्न कारणों से इस साहित्य का अधिकाँश भाग कक्षाओं में स्थान नहीं पाता है।

शिक्षक तैयार करना–शिक्षक-प्रशिक्षण और विकास

शिक्षकों की शिक्षा को निरंतर जारी रखने और अपने क्षेत्र से (औपचारिक व अनौपचारिक सहयोगी व्यवस्थाओं द्वारा) जुड़े रहने की आवश्यकता है। साथ ही उसकी तैयारी भी होनी चाहिए। चूँकि अक्सर शिक्षक ही रोल मॉडल उदाहरणार्थ-पठन के लिए होते हैं अतएव भाषा के साथ उनके परिचय या निपुणता पर जोर दिया जाना चाहिए। भाषा-शिक्षण के प्रति शिक्षक में जागरूकता या संवदेनशीलता विकसित करने का यह भी एक तरीका है। निपुणता और पेशेवर जागरूकता को भी बढ़ाने की इतनी ही जरुरत है और विशेष रूप से पेशेवर जागरूकता के बारे में, जहाँ आवश्यक है, शिक्षक को अपनी भाषा में बताया जाना चाहिए।

पाठ्यचर्या अपने क्रियान्वयन से ही महत्त्व पाती है। 1960 की संरचनात्मक पाठ्यचर्या का उद्देश्य था 'टीचर-प्रूफ़' सामग्री तैयार करना। यह

मॉडल भाषायी, शैक्षणिक और मनोवैज्ञानिक सभी मायनों में असफल रहा। उसके बाद की यह मान्यता कि शिक्षक 'शिक्षा को सुगम बनाने वाला है' की विश्वसनीयता पर भी सवाल खड़े हो गए। जहाँ शिक्षक को भाषा–सामग्री का एकमात्र आपूर्तिकर्ता बनने की जरुरत नहीं है (जो कि पाठ्यपुस्तक पर उसकी निर्भरता से जाना जाता है) वहीं किसी भी कक्षा–गतिविधि या नवाचार की सफलता भाषा में शिक्षक के भाषा संबधी संसाधनों से तय होती है।

(अ) अँग्रेज़ी में शिक्षकों की निपुणता शिक्षक के संतोष के बोध यानी अँग्रेज़ी पढ़ाने की उसकी इच्छा से संबंधित है (कृष्णन और पंडित 2003)। अब तक शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इस कारक पर ध्यान नहीं दिया गया है। अपेक्षाकृत देर से अँग्रेज़ी की शुरुआत कराने की सिफ़ारिश इस बात की अपेक्षा रखती है कि बाद के स्तर पर बेहतर (भाषा–निपुणता) शिक्षक उपलब्ध होंगे (संभव है यह सच न हो)। अब अँग्रेज़ी का विस्तार कुछ ऐसी स्थितियों तक हो गया है जहाँ शिक्षक और उसकी कक्षा ही एकमात्र स्रोत हो तो शिक्षक की निपुणता पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

(ब) निपुणता को यथायोग्य स्थान देने के बाद शिक्षक की तैयारी के वैचारिक या विकासात्मक अवयवों को शिक्षक की अपनी भाषा में देने की स्वतंत्रता होती है ताकि बोधगम्यता और बहस सुनिश्चित हो सके। अँग्रेज़ी के जरिये शिक्षक–प्रशिक्षण में अक्सर इसके अकादमिक अंतर्वस्तु की भाषा को समझने में कठिनाइयाँ आई हैं जिससे शिक्षण–प्रविधि में क्लिष्टता आ जाती है। असम का अनुभव (डोवेरा 2005) बताता है कि अकादमिक अंतर्वस्तु को शिक्षक की अपनी भाषा में भी प्रस्तुत किया जा सकता है। स्कूल शिक्षकों को अनिवार्यत– सेवा–पूर्व प्रशिक्षण और सेवा–काल में नियमित अंतरालों पर प्रशिक्षण मिलना चाहिए; इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि शिक्षक को लगातार चल रही नियमित गतिविधियों से कुछ देर के लिए अलग किया जा सके। सेवा–पूर्व शिक्षा पाठ्यचर्या और प्रशिक्षकों को समृद्ध बनाने से लाभान्वित हो सकती है ताकि अधिगम में हुए संज्ञानात्मक आंदोलन की झलक आ सके; 'पाठ की योजना' को अक्सर तात्कालिक व्यावहाँरिक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर बनाया जाता है जबकि विषयवस्तु, नियमों, परिभाषाओं के बजाए भाषा और शब्द–संग्रह 'विकास' के पक्ष में पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं।

(स) यदि कारगर विचारों को पहचानना और उपयोग में लाना है तो कार्य के स्थान पर ही किए जाने वाले हस्तक्षेप अपरिहार्य हो जाते हैं। 'सिद्धांत' (या अकादमिक भंगिमा) और व्यवहार' (या रोजमर्रा की उत्तरजीविता) तथा सिद्धांतकारों और व्यवहार करने वालों के बीच की गहरी खाई उनके कार्यस्थलों के बीच की खाई का आईना है। यदि 'प्रशिक्षक' पर्याप्त सँख्या में उपलब्ध नहीं हैं तो शिक्षक स्वयंसेवी समूह बना सकते हैं। उन्हें पढ़ाई और मीडिया की सामग्री का

समर्थन दिया जा सकता है। इससे जमीनी स्तर के नवाचारों को बढ़ावा मिलेगा।

ऐसे विचारवान शिक्षकों की आवश्यकता है जिनमें भाषा-सीखने और अँग्रेज़ी-बहुभाषी कक्षा की गहरी समझ हो। मौजूदा सेवा-पूर्व और सेवाकालीन पाठ्यचर्या को इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बदलना होगा। दो ऐसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिन्हें शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम में अवश्य सम्मिलित करना चाहिए - सीखने के मनोविज्ञान की समझ तथा भाषा और साक्षरता ग्रहण की प्रक्रियाएँ, इसके साथ ही वे मुद्दे भी शामिल किए जाएँ जिनका जिक्र इस दस्तावेज़ में हुआ है।

मूल्याँकन

सभी जगह परीक्षा को पाठ्यचर्या-सुधार की एकमात्र या प्रमुख बाधा माना जा रहा है। मूल्याँकन-विधि को किस प्रकार एक अड़चन के बजाए शिक्षा के लिए एक सहायक कारक बनाया जा सकता है? ***भाषा-मूल्याँकन*** को किसी खास पाठ्यक्रम में 'उपलब्धि' तक सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि इसे भाषा-निपुणता की माप की दिशा में मोड़ा जाना चाहिए। हम भाषा-निपुणता के निरंतर जारी मूल्याँकन के कुछ तरीकों पर चर्चा करेंगे।

निरंतर जारी सतत मूल्याँकन

निरंतर जारी, सत्त अथवा रचनात्मक मूल्याँकन के लिए की गई सिफ़ारिशों और शिक्षकों द्वारा बताई गई जमीनी वास्तविकताओं और समस्याओं में विरोधाभास यह दर्शाता है कि जारी मूल्याँकन तभी सार्थक हो सकता है जब शिक्षक और शिक्षार्थी अपनी प्रगति का दायित्व स्वयं लें, न कि किन्हीं बाहरी (वास्तविक या काल्पनिक, तात्कालिक या अंतिम चरण तक) मानदंडों के अनुसार प्रदर्शन करते रहें। शिक्षक और शिक्षार्थियों को सीखने की 'उपस्थिति' जो कि एक मानसिक विकास है और अगोचर है शारीरिक विकास जैसा दिख सकने वाला नहीं, को पहचान सकने में सक्षम होना चाहिए।

किसी ऐसे पोषण कार्यक्रम (क्रेश डायट या चमत्कारी विकास कर देने वाले पोषाहारों के अलावा) के बेतुकेपन की कल्पना करें जिसमें विद्यार्थियों की ऊँचाई और वजन की रोजाना, साप्ताहिक और मासिक अंतराल पर माप करनी पड़े। फिर भी जारी मूल्याँकन का काम ठीक इसी अंतर्दृष्टिहीन रूप से चलता रहा है। यह व्याधि सीखने की प्रक्रिया की गहरी समझ के बगैर दूर नहीं हो सकती क्योंकि यह प्रक्रिया व्यक्तिगत और आत्मनियंत्रित होती है। यह गहरी समझ शिक्षकों के लिए अनिवार्य है ताकि वे बच्चों की भाषा सीखने की प्रक्रिया और निपुणता के सूक्ष्म परिवर्तनों को देख सकें (और सराहना कर सकें)। शायद सभी मूल्याँकनों को अंततः आत्म-मूल्याँकन का ही लक्ष्य रखना होगा (यह शब्दावली दूरवर्ती शिक्षा में प्रचलित तो है पर वहाँ इसकी अनुपस्थिति खेद का विषय है) अगर शिक्षार्थी सीखने के बारे में विकल्पों को स्वेच्छा से चुनने के योग्य है और वह 'जीवनपर्यंत सीखने वाला' बना रहता है। एक शिक्षक जब अपने विद्यार्थियों को जान लेता है मुख्यतः उनके आत्म-मूल्याँकन का सहानुभूतिपूर्ण मददगार होता है (फिर वह एक अनजाना मूल्याँकनकर्त्ता नहीं रहता जो उपलब्धियों को मानकीकृत मापदंडों से मापता है)। कोई कैसा मूल्याँकन करता है उसी

से तय होता है कि बच्चा अपना मूल्याँकन कराना चाहता है कि नहीं।

जहाँ सर्वाधिक शिशु-केंद्रित मूल्याँकन प्रविधि भी कुछ व्यक्तियों के लिए परेशानी का कारण हो जाती है वहाँ मूल्याँकन की एक व्यवस्था होनी ही चाहिए, इस बारे में कोई विवाद नहीं है। सवाल यह है कि कैसे और कितना। शिक्षार्थी तभी मूल्याँकनों में आराम से भाग लेते हैं जब हमेशा असफल होने का अनुभव न हो और परिणाम को आगे सीखने के लिए एक वैध और उपयुक्त कदम के रूप में देखा जाए। दुर्भाग्यवश अधिकांश बच्चों के लिए शिक्षा-प्रक्रिया में मौजूदा मूल्याँकन विधियों की तात्कालिक भूमिका स्पष्ट नहीं है। शिक्षार्थी की वर्तमान विकास अथवा संप्राप्ति की स्थिति का निर्धारण करके सत्त मूल्याँकन शिक्षण को उत्साहित और निर्देशित करना चाहिए ताकि उसके निकटस्थ विकास के क्षेत्र' की पहचान हो सके। (क्रेशन के अनुसार जब शिक्षार्थी की भाषा i स्तर पर हो तो सामग्री $i+1$ के स्तर पर होनी चाहिए)। सीखने की उपलब्धियाँ भाषायी अवसरों का परिणाम हैं। नीचे हम कुछ ऐसी उपलब्धियों की सूची दे रहे हैं–

बोलना

बोलने की शुरुआत

(क) मातृभाषा (एँ) सीखने में बोलने की प्रक्रिया- पहले एक शब्द जो ज्यादातर संज्ञा-पद होते हैं, से दो-शब्द का स्तर होते हुए कई शब्दों वाले वाक्य जिसमें क्रियाएँ, सहायक क्रियाएँ, निर्धारक, विशेषण और पूर्वसर्ग होते हैं, तक प्रगति करती है। सी.आई.ई.एफ.एल. (जांगिड़ 2005; 'विजया कार्याधीन') के कुछ शोध बताते हैं कि दूसरी भाषा सीखने वालों की बोली की प्रगति भी इसी प्रकार के समान स्तरों से होकर चलती है। सामान्यत: सीखने वालों का उनकी भाषा पर नियंत्रण औसत लंबे वाक्यों में झलकता है। दीर्घ भाषायी सामग्री का उपयोग भाषा उत्पादन के ऐसे ही परिणामों में दिखता है (उत्तर देने में– जैसे—कि जब बच्चे को तस्वीरें दिखाई जाएँ)। इसके विपरीत जब बच्चों को सख्ती से कक्षाओं में पढ़ाया जाता है तो वे तस्वीरें दिखाने पर स्पष्ट नहीं बोल पाते या ज्यादातर इन तस्वीरों को देखते हुए संज्ञाओं वाले एक शब्द बोल पाते हैं। इस प्रकार शिक्षक 3 या 4 महीनों के अंतराल पर इस तरह का यत्न करके बच्चे के भाषा विकास का आंतरिक बोध पा सकते हैं।

(ख) ऐसे मूल्याँकनों के परिणाम निम्नलिखित हो सकते हैं–

(क) प्रत्येक बच्चे के लिए बने पोर्टफोलियो में दर्ज प्रविष्टि (टिप्पणी) के रूप में (पोर्टफोलियो आकलन); या

(ख) शिक्षक या बच्चे की डायरी में दर्ज करके। शिक्षक-विकास कार्यक्रमों के स्रोत के रूप में शिक्षक डायरियों की काफ़ी चर्चा हो रही है। शिक्षार्थियों को भी अपनी भाषा (या दूसरी भाषा) जिसे वे भलिभाँति जानते हैं, की प्रगति को संचालित करने के लिए सीखने के अपने अनुभवों को निजी डायरियों में उन्मुक्त रूप से दर्ज़ करने को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

बोलना : उप-कुशलताएँ– बाद के स्तरों पर जाँच के लिए बोलने की कुशलता को उप-कुशलताओं के जरिये विश्लेषित किया जा सकता है।

पढ़ना

बोध और कठिनाई के स्तर पर स्वयं की प्रगति पर नजर रखना– *अँग्रेज़ी 400* जैसे पढ़ने के कार्यक्रमों में कठिनाइयों के विविध स्तरों के अनुरूप बने कार्डों द्वारा प्रगति के आकलन की विधि साथ-साथ तैयार मिलती है। इनके मूल्याँकन का मानकीकरण करने की आवश्यकता है।

पढ़ना : कुछ उप-कुशलताएँ

(क) जोर-जोर से पढ़ना/डिकोडिंग जैसे-जैसे बच्चे डिकोडिंग में ज्यादा निपुण होते जाते हैं वे अधिक तेजी से (शब्द प्रति मिनट) और कम गलतियों के साथ पढ़ने लगते हैं। ऐसे भी बच्चे हो सकते हैं जो किसी शब्द को अक्षरों में बाँटकर पढ़ने से शुरु करें ताकि शब्द के हिज्जे करते हुए उसका उच्चारण कर सकें, हिज्जे करने का यह कौशल बाद में नए शब्द सीखने तक पहुँच जाता है।

(ख) किसी सूचना के लिए पाठ की पूरी तरह छानबीन (जैसे किसी सूची, टेलिफ़ोन डॉयरेक्टरी, विज्ञापन आदि को)।

(ग) दी हुई सूचना के लिए पठन (तथ्यात्मक बोधगम्यता)।

(घ) निष्कर्ष के लिए पढ़ना।

(ङ) विस्तारित पठन।

लेखन और सुनने की जाँच को भी इसी तरह उप-कुशलताओं में बाँटा जा सकता है। इस प्रकार की जाँच को एकीकृत भाषा जाँच (उदाहरणार्थ, क्लोज टेस्ट से शुरु करके) से अनुपूरित किया जा सकता है। मूल्याँकन के लिए उप-कुशलताओं के इस नजरिये से शिक्षक को प्रत्येक शिक्षार्थी की खास विशेषताओं की अंतर्दृष्टि मिल सकती है। मसलन कोई मुखर या स्पष्टवादी शिक्षार्थी पढ़ने जैसी अंतर्मुखी और निजी गतिविधि में अच्छा न हो या बहुत रुचि न ले सकता हो। एक शिक्षक विद्यार्थी के मजबूत और कमजोर क्षेत्रों को पहचान सकता है जहाँ मदद की जरुरत है।

समेकित मूल्याँकन

'उपलब्धि' की बजाए 'निपुणता' की दिशा में ही होना चाहिए अर्थात् पढ़े हुए अंशों पर अधिकार का परीक्षण करने के बजाए भाषा का नए (भले ही बार-बार आने वाले) संदर्भों में उपयोग की योग्यता हो, इसमें–

- उम्र के अनकूल सामग्री को पढ़ना।
- उम्र के अनकूल सामग्री को सुनना और समझना।
- उम्र के अनुकूल साम्रगी/विषयों पर बातचीत करना।
- उम्र के अनुकूल विषयों पर लेखन।
- ग्रहणशील शब्दावली पर अधिकार।
- अभिव्यक्ति-योग्य शब्द-संग्रह पर अधिकार।

भाषा-निपुणता के राष्ट्रीय मानदंडों के विकास के लिए पहले इन सभी मुद्दों पर अखिल भारतीय प्रतिनिधि नमूनों के विश्वसनीय और विवरणात्मक आँकड़े इकट्ठे करने की जरुरत है। राष्ट्रीय स्तर के ऐसे मानदंड या औसत, जहाँ जरुरत हो वहाँ सामाजिक विज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में समर्थन

की पहल के लिए पूर्वगामी होते हैं। इनसे, सीखने के प्रयास में दी जाने वाली जिस पाठ्यचर्यात्मक स्वतंत्रता का हमने सुझाव दिया है, और मूल्याँकन के मानकीकरण, जो प्रमाणीकरण के लिए आवश्यक हैं, का संतुलन भी बना रहेगा।

इन मानदंडों के द्वारा राष्ट्रीय अँग्रेज़ी भाषा परीक्षाओं के एक सैट, अर्थात् परीक्षाओं के एक बैंक को निर्मित करना होगा जिसे शिक्षक और शिक्षार्थी स्व-मूल्याँकन के लिए प्रयोग कर सकते हैं। इन परीक्षाओं को एक विस्तृत ग्रेड या अँकों की बजाए निपुणता के अधिक सूक्ष्म मापक तय करने चाहिए (वर्तमान में, अनदेखे उदाहरणों की बोध गम्यता पर मिले आँकड़ों को पढ़े हुए उदाहरणों को याद करने के परीक्षण में मिले अँकों से मिश्रित कर दिया गया है, जिससे 'निपुणता' और 'उपलब्धि' को एक जैसा ही मान लिया गया है), शिक्षकों का यह दृढ़ अंतर्ज्ञान है कि इन चारों कुशलताओं में सभी शिक्षार्थी एक समान निपुण नहीं होते; इसीलिए कुशल वक्ता जरुरी नहीं कि कुशल लेखक हों क्योंकि 'शुद्धता' और 'प्रवाह' के बीच, संभव है कि सीखने की प्रक्रिया के दौरान कोई समझौता हो गया हो। सभी पेशों के लिए सभी कुशलताएँ जरुरी भी नहीं होतीं। विभिन्न शिक्षार्थियों की अभिरुचि और क्षमता के अंतर को दर्शाने वाले अँक जहाँ रोजगार-संभावनाएँ बढ़ाएँगे वहीं इसका पाठ्यचर्या पर 'वाशबैक' प्रभाव पड़ेगा।

राष्ट्रीय अँग्रेज़ी भाषा परीक्षाएँ दसवीं कक्षा में प्रमुख रूप से अँग्रेज़ी (गणित के साथ) के कारण फेल होने की वर्तमान समस्या का निदान होने के कारण भी महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। यदि अँग्रेज़ी के प्रमाण पत्र के लिए (और शिक्षण के लिए) नियमित स्कूली पाठ्यचर्या से अलग कोई वैकल्पिक रास्ता दिया जा सके तो 'शिक्षार्थी को अँग्रेज़ी के बिना' कक्षा 10 उत्तीर्ण करने की अनुमति दी जा सकती है।

कुल मिलाकर, भाषा की कुशलता के लिए बने **मानकीकृत राष्ट्रीय मानदंड** जो विभिन्न स्तरों की राष्ट्रीय अँग्रेज़ी भाषा परीक्षा के रूप में ढलते हैं, इनसे–

1. व्यक्तिगत रूप से विद्यार्थी या स्कूल को अपनी स्थिति का जाएजा लेने में मदद होगी– कि उनकी शक्ति और कमजोरियाँ क्या हैं और वे आगे तरक्की कैसे कर सकते हैं।
2. आकलन के मानकीकरण के साथ सीखने की स्वतंत्रता (पाठ्यचर्या, समय अवधि) का संतुलन हो सकता है।
3. दसवीं कक्षा में अँग्रेज़ी की असफलता को दसवीं कक्षा में फेल हो जाने से अलग करके नियमित स्कूली पाठ्यचर्या से अलग अँग्रेज़ी प्रमाण-पत्र का एक वैकल्पिक रास्ता उपलब्ध करवाया जा सकता है।

दो पूरक टिप्पणियाँ

भाषा सीखने की दृष्टि से 'विशेष अवधि' और 'संवेदनशील समय' (सेंसिटिव विंडो) की प्राक्कल्पना

इस बात पर खूब चर्चा है कि क्या मस्तिष्क का 'भाषाग्राही उपकरण' प्रौढ़ व्यक्ति में दूसरी भाषा के ग्रहण के लिए भी काम करता है। इस विषय को एक मानक पत्रिका 'सैकंड लैंग्वेज रिसर्च' जो 1985 से शुरु हुई, में दिया गया है। जानसन

और न्यूपोर्ट (1989) का एक क्लासिकी अध्ययन व्याकरण के एक सिद्धांत *सबजेकेंसी'* (अर्धलग्नित) और दूसरी भाषा-ग्रहण की उम्र के बीच परस्पर संबंध सुझाता है।

बच्चों में भाषा-ग्रहण के लिए लिनबर्ग (1967) ने विशेष अवधि का एक जैविक तर्क दिया था कि यह अवधि 2 से 12 वर्ष की उम्र या तरुणावस्था तक होती है। लिनबर्ग की प्राक्कल्पना जीव-वैज्ञानिक रूप से शारीरिक और मानसिक संरचना को एक नियत समयावधि के अंदर सक्रिय करने के बारे में थी (इसे संवेदनशील समय' भी कहा जाता है)। प्रौढ़ों के द्वारा दूसरी भाषा सीखने में इसके दावे सीमित थे और वे अपनी चर्चा को वाचिकता *(रिलेटरलाइजेशन)* या तांत्रिकीय सुघट्यता (न्यूरल प्लास्टिसिटी) के द्वारा हुए भाषा-क्षरण (मातृभाषा) की भरपाई पर केंद्रित करते हैं।

क्रेशन (1985) ने लिनबर्ग से असहमति जताई। वे सप्रमाण कहते हैं कि विशेष अवधि [(वाक्लोप अफ़ेसिया) की भरपाई की समय-अवधि] 5 वर्ष की आंरभिक उम्र में ही खत्म हो जाती है, लेकिन (जैसा कि अधिकाँश शोधकर्ताओं का मानना है) दूसरी भाषा के ग्रहण, जो कि मूल निवासियों के उच्चारण जैसा हो, को शिक्षार्थी 8 वर्ष की उम्र तक कर सकते हैं (इस उम्र के बाद उच्चारण पर असर पड़ता है)। दूसरी तरफ वर्तमान शोध के अनुसार 'मातृभाषा-बोध का फिल्टर' बच्चों में बहुत पहले आ जाता है। जिससे बच्चे हर भाषा में छांदिक पहचान (बलाघात और लय के अनुसार) जन्म से ही कर सकते हैं, पर दो महीने की उम्र से ही वे दूसरे भाषा-प्रकारों से केवल अपने भाषा-प्रकार को अलग कर सकते हैं। (जैसे कि फ्राँसीसी/स्पेनी से अँग्रेज़ी/डच को) (मेहलर और क्रिस्टोफ, 2000)। (इससे शिशुओं को अपनी भाषा का शब्दक्रम निर्धारित करने (एस.वी.ओ. /एस.ओ.वी.) में सहायता मिलती है)। द्विभाषी बच्चे अंतर कर सकने वाली अवस्था पाने में थोड़ा ज़्यादा वक्त (चार महीने का) लगाते हैं।

स्वाभाविक व अस्वाभाविक भाषा-ग्रहण की विशेष भाषा-दक्षता से विविध उम्रों के संबंध के इसी प्रमाण के कारण संवेदनशील समय (जो सीखने की उपयुक्त अवधि सुझाता है) के स्थान पर भाषा सीखने की दृष्टि से विशेष अवधि (जो कि सीमाएँ निर्धारित करता है) का उपयोग होने लगा।

शोधकर्ता, जो ब्रेन-इमेजिंग की तकनीक का प्रयोग करके वयस्कों में मस्तिष्क की गतिविधियों का अवलोकन करते हैं, उन्होंने निपुणता के स्तर और प्रतिनिधित्व के क्षेत्र के बीच जुड़ाव तो पाया है पर भाषा-ग्रहण की उम्र का कोई प्रभाव नहीं पाया है (पेरानी आदि 1998)। यह पी.ई.टी. अध्ययन उन इतालवी लोगों पर किया गया, 'जिन्होंने दस वर्ष की उम्र के बाद अँग्रेज़ी सीखी और अच्छा प्रदर्शन किया' (मेहलर और क्रिस्टोफ 2000 : 903)। किम व अन्य द्वारा इस 'मूकवाचन' का एफ.एम.आर.आई. के उपयोग से किए गए एक अध्ययन में दो भाषाओं में अधिग्रहण की उम्र में वर्निक के क्षेत्र (बोधगम्यता) में अधिव्याप्ति देखी गई पर ब्रोका के दो भाषाओं के क्षेत्र (उत्पादन) में अंतर पाया गया। पर यह अध्ययन निपुणता पर कोई नियंत्रण नहीं कर पाया।

स्पष्ट है कि इन अध्ययनों के परिणाम ज़्यादा से ज़्यादा अनेकार्थी कहे जा सकते हैं। इन क्षेत्रों में

भारतीय शोध बहुत कम है। जो भी हो, पाँचवीं कक्षा (10 से ज्यादा उम्र) से भी अँग्रेज़ी की शुरुआत करना लिनबर्ग के 'झरोखे' के अंतर्गत ही आता है। दरअसल यह मसला उतना बड़ा नहीं है कि अँग्रेज़ी की शुरुआत किस उम्र से हो बल्कि मसला यह है कि इस भाषा को सीखने के लिए क्या अनुभव और सुविधाएँ उपलब्ध हैं, लंबे असफल अवसरों (कक्षा एक से दसवीं कक्षा तक) के बजाए दो या तीन वर्षों के बेहतर अवसर अधिक अच्छे हैं।[17]

भारत में वयस्कों को सफलतापूर्वक विदेशी भाषाएँ (फ्रांसीसी, जर्मन ....) सिखाने के अनुभव से भी कुछ सीखा जा सकता है। इसके अलावा निम्नलिखित भारतीय अनुभव–

1. ससुराल की भाषा सीख रही बहुएँ।
2. क्षेत्रीय भाषा-माध्यम के स्कूलों से निकले वे लोग जिन्होंने अँग्रेज़ी के अकादमिक व बौद्धिक क्षेत्र में मूल निवासियों जैसी निपुणता हासिल की हो।
3. अखिल भारतीय सेवा के लोगों और उनके परिवार की बहुभाषिकता पर पकड़।

इन अनुभवों को लिपिबद्ध करने, सावधानी से मूल्याँकन करने और इनकी आलोचनात्मक जाँच करने की आवश्यकता है।

इस बीच, सफलता के वैकल्पिक तरीकों का प्रदर्शन करके ही समाज की प्रचलित वैकल्पिक प्रवृत्तियों को रोका जा सकता है। हमें बहुभाषीय स्कूल खोलने का लक्ष्य अपनाना चाहिए जहाँ किसी भी अकेली भाषा को 'शिक्षण का माध्यम' का विशेष दर्जा हासिल न हो बल्कि वहाँ उपलब्ध भाषाओं का उपयोग संसाधनों के स्रोत के रूप में हो।

कैसी अँग्रेज़ी?

अपने प्रारंभिक बोलचाल के स्वरूप से ही भाषा सामाजिक या भौगोलिक बोलियों का सत्त रूप है जो कि सन्निकट स्थानों पर समझ लिया जाता है पर जब स्थान सामाजिक, भौगोलिक या समय के लिहाज से दूर हों तो समझने में कठिनाई होती है। अधिकांश वक्ता एक से अधिक बोलियों या भाषा-प्रकारों (औपचारिक या अनौपचारिक विविधताओं) पर अधिकार रखते हैं। भाषा के लेखन की विविधताओं ने मुद्रण के आविष्कार के बाद एक मानकीकृत किस्म का रूप लेना शुरु किया है जो विशेष रूप से शिक्षा और अकादमिक जीवन में एक मानक की तरह कार्य करता है, इस तरह के संप्रेषण के सापेक्षिक स्थायित्व के लिए यह आवश्यक भी है। भारत के लिए अँग्रेज़ी का कौन सा प्रकार उपयुक्त है, इस पर बहस अधिकतम उच्चारण (बोलचाल की अँग्रेज़ी) के आसपास ही सिमटी रही है, दूसरा स्थान शब्दकोश या शब्द-भंडार का रहा है। स्वीकार्य उच्चारण की कसौटी बोधगम्यता होनी चाहिए। डेविड क्रिस्टल के अध्ययन का तीन बोलियों का मॉडल जहाँ वक्ता एक स्थानीय बोली (जैसे पंजाबी-अँग्रेज़ी या तमिल-अँग्रेज़ी) से सहजता से एक राष्ट्रीय बोली (भारतीय अँग्रेज़ी) या अंतर्राष्ट्रीय बोली तक पहुँच पाता है, एक उपयुक्त मॉडल लगता है। कॉल सेंटरों में युवा भारतीयों की सफलता बताती है कि 'उच्चारण ट्रेनिंग' में क्षेत्रीयताओं को भूलकर तटस्थ वाचन शैली अपनानी होती है। यह बोलने को धीमा करके और स्पष्टता से लयबद्ध उच्चारण द्वारा काफ़ी हद तक हासिल किया जा सकता है।

[17] पश्चिम बँगाल में प्राथमिक शिक्षा पर गठित एक सदस्यीय कमीटी की रिपोर्ट भी देखें, 1998, पृ. 22-28.

ये ही कारक हैं जो किसी भी भाषा में उच्चारण की ध्वनि को सुधारते हैं।

ध्वनि की अगर बात करें, तो बोलचाल की 'भारतीय अँग्रेज़ी' की कुछ अखिल भारतीय विशेषताएँ बताई गई हैं। जैसे संयुक्त स्वर की जगह लंबे स्वर और मूर्धन्य व्यंजनों की जगह वर्त्स्य व्यंजन। भारतीय अँग्रेज़ी की कई विशेषताएँ वक्ताओं की मातृभाषाओं की झलक देती हैं। यह तथ्य है कि 'भारत' एक राष्ट्र है पर 'भारतीय' नामक कोई एक भाषा नहीं है। मातृभाषियों की ये विशेषताएँ जितनी कम दुराग्रही/बाध्यकारी होंगी, दूसरी भाषाओं के उच्चारण की स्वीकार्यता उतनी ही बढ़ेगी। सामान्य अनुभव बताता है कि किसी एक व्यक्ति के बोलने की शैली एक से अधिक हो सकता है, कुछ उसी तरह जैसे कि वह अपनी मातृभाषा के अलावा कई और उच्चारणों को समझता है।

शब्द-संग्रह पर आएँ, भाषा-विज्ञान की दृष्टि से किसी भाषा का शब्द-संग्रह एक ऐसी खुली कक्षा है जो जितना उधार लेती है, उतना ही समृद्ध होती है। सर्वविदित है कि अँग्रेज़ी शब्द-संग्रह की शक्ति उसके स्रोतों की समृद्धि है। मानक शब्दकोशों के साथ भारत में प्रचलित अँग्रेज़ी शब्दों के परिशिष्ट भी दिए गए हैं। निश्चित रूप से इन्हें कक्षा से बाहर रखने का कोई कारण नहीं है। हम शब्दकोशों में पूर्व सर्गों के मुहावरेदार प्रयोगों को शामिल कर सकते हैं। On a Bus की बजाए In a bus का प्रयोग, और गणित में Into का प्रयोग। ब्रिटिश अँग्रेज़ी में Into का अर्थ एक सँख्या से दूसरी सँख्या को विभाजित करना होता है जबकि भारत में सँख्याओं को गुणा करना। ऐसे प्रयोगों को अमानकीकृत व्याकरण नहीं समझना चाहिए।

शेष के लिए हम एक बोधगम्य सामग्री-समृद्ध पाठ्यचर्या की अपेक्षा करते हैं जो कि मस्तिष्क में ऐसे भाषा तंत्र की रचना करे जो लगभग मानक किस्म का हो [अधिक चर्चा के लिए देखें प्रभु (1987)]।[18] स्पष्टतः हम भारतीय अँग्रेज़ी को कमतर नहीं मानते, और एक बार भाषा में निपुणता एक बुनियादी व्याकरणिक दक्षता आ जाने के बाद भारतीय शिक्षकों की अँग्रेज़ी भी कमतर नहीं होती है। लेकिन एक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की परिकल्पना में सभी तरह के सीखने वालों के लिए समान तुलनात्मक सामग्री होनी चाहिए। इस विचार कि अँग्रेज़ी पहले कुछ सुविधासंपन्न लोगों को उपलब्ध हो और बाकियों को बाद में, पहले से ही समीक्षा की जा रही है। हम नहीं चाहते कि कुछ लोग अँग्रेज़ी' सीखें और कुछ भारतीय अँग्रेज़ी'। हम मानते हैं कि एक मानक और आत्मसातीकृत अँग्रेज़ी की दक्षता पाना न सिर्फ़ व्यावहारिक है बल्कि अपेक्षित भी है।

अँग्रेज़ी का कौनसा मॉडल पढ़ाया जाए, यह शिक्षकों के दिमाग पर इतना हावी नहीं होना

[18] ऐसे तंत्र में कुछ भारतीय विशेषताएँ दिख जाती हैं जो कि समझने के लिहाज से तो कोई दिक्कत नहीं पैदा करतीं, पर उनकी सामाजिक मान्यता अवरोध पैदा करती है। उदाहरणस्वरूप Too Good का प्रयोग Very Good के लिए करना अभिप्रेत अर्थ में हस्तक्षेप करता है। इसमें सुधार की जरुरत है। प्रश्नों में। Auxiliary को उल्टा नहीं करने में असफल रहा सन्निहित और अनावश्यक रूप से। Auxiliary को उल्टा करना, (Why you said so? I wonder why did he say so) बौद्धिक रूप से समझने में कतई बाधक नहीं है जबकि शैक्षिक व सामाजिक दृष्टि से इन पर प्रश्न उठाए जा सकते हैं।

चाहिए कि वह किसी तरह की भी अँग्रेज़ी के ग्रहण में बाधक बन जाए। ऐसा भी नहीं है कि अँग्रेज़ी में दक्षता की कमी की सफ़ाई भारतीय अँग्रेज़ी' के नाम पर दी जाए। व्यापक परिप्रेक्ष्य में वैश्विक बाजार में भारत के शिक्षकों (और शिक्षक-प्रशिक्षकों) की भी काफ़ी माँग है। इससे हमारी अँग्रेज़ी की अधिक क्षमताओं पर विश्वास को और बल मिलना चाहिए।[19]

शोध परियोजनाएँ

भाषा-शिक्षण में आधारभूत आँकड़ों की प्राप्ति, पाठ्यचर्या के नवाचार और उनका क्रियान्वयन तथा दूसरी भाषा अधिग्रहण की समझ की **सैद्धांतिक प्रगति के लिए शोध परियोजनाओं** को मौजूदा सोच पर आधारित होना होगा। व्यापक क्षेत्र जिनमें ऐसी परियोजनाओं की अवधारणा हो सकती है, वे हैं

1. पूरी पाठ्यचर्या में भाषा:सामाजिक विज्ञान और विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों की भाषा (मौखिक गणित की भी)। प्रश्नों की पद्धति और भाषा से विषयवस्तु का संबंध।
2. (अ) भाषायी सामग्री और भाषायी वृद्धि : एक समग्र परिप्रेक्ष्य,
   (ब) बोलचाल की भाषा (मुद्रित सामग्री के साथ और उसके बगैर),
   (स) लिखित भाषा (जोर से बोलकर पढ़ने के साथ और उसके बगैर),
   (द) प्राथमिक स्तर पर अँग्रेज़ी की स्थिति,
   (य) पाठ्यसामग्री और गतिविधियों का बैंक (स्तर 1)
3. बहुभाषावाद को बढ़ावा देने वाली युक्तियाँ और सामग्री।
4. विशेष समूहों के लिए (सामाजिक हाशिये पर, सीखने में कमजोर क्षमता वाले) पाठ्यचर्या के विकल्प।
5. शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों के परिणाम।

सिफ़ारिशें

शिक्षक

- अँग्रेज़ी पढ़ाने वाले सभी शिक्षकों की अँग्रेज़ी में बुनियादी निपुणता होनी चाहिए।
- सभी शिक्षकों में अपनी परिस्थितियों और स्तरों के अनुसार उपयुक्त ढंग से अँग्रेज़ी पढ़ाने की कुशलता हो जो इस ज्ञान पर आधारित हो कि भाषाएँ कैसे सीखी जाती हैं।

इन दोनों सिफ़ारिशों का संबंध सेवापूर्व व सेवाकालीन शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों की विषयवस्तु से है।

[19] एक रुचिकर प्रश्न भाषा शिक्षण और अँग्रेज़ी भाषा शिक्षण के संबंध को लेकर है। जहाँ अँग्रेज़ी भाषा शिक्षण को ब्रिटिश उद्योग के रूप में देखा जा सकता है। हमने अपनी चर्चा को दूसरी भाषा के अधिग्रहण के व्यापक क्षेत्र से जोड़ा है। इस परचे में हमने अपनी जिम्मेदारी शैक्षणिक संदर्भों में देखते हुए, इस राष्ट्र में पाठ्यचर्या नवीनीकरण के कार्य को संबोधित किया है। इसमें हमने सीखने के मनोविज्ञान और भाषा के मनोविज्ञान की वर्तमान अंतर्दृष्टि का यथोचित उपयोग किया है। इसलिए हमारे कई अवलोकन और सिफ़ारिशें (जैसे संज्ञानात्मक अकादमिक भाषायी दक्षता की चर्चा) सामान्य रूप से भाषा शिक्षण (या शिक्षा में भाषा) से संबंधित है। ई.एल.टी. पेशे की काफ़ी सारी वर्तमान चर्चा अँग्रेज़ी की राजनीति और विचारधारा पर आधारित है- तीसरी दुनिया पर अँग्रेज़ी (और व्यापक रूप से पश्चिमी) के वर्चस्व के संदर्भ में (देखें कनगराजा 2005) । बहुभाषावाद के सरोकार और स्थानीय भाषा के महत्त्व और विकल्प हमारे सिफ़ारिशों में काफ़ी हद तक शामिल है। इसीलिए हमें पश्चिम और हमारे बीच की बौद्धिक बहसों में जाने की जरुरत नहीं लगती है। क्योंकि खासतौर से हम मानते हैं कि मानक और आत्मसातीकृत अँग्रेज़ी दक्षता व्यावहारिक तथा अपेक्षित है।

पाठ्यचर्या

- अर्थ पर बल देने वाली सार्थक और समृद्ध पाठ्यचर्या उपलब्ध करवाने के लिए विविध प्रकार की सामग्री उपलब्ध करवाई जानी चाहिए।
- अँग्रेज़ी माध्यम तथा क्षेत्रीय भाषा माध्यम वाले दोनों प्रकार के स्कूलों का लक्ष्य बहुभाषिकता होना चाहिए। इसी तरह पूरी पाठ्यचर्या में भाषा' का दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए।

इन सिफारिशों का संबंध पाठ्यपुस्तकों की रूपरेखा और उपयुक्त तरीकों (जैसे कक्षा-पुस्तकालय व मीडिया सामग्री) के चयन से है।

मूल्याँकन

- मूल्याँकन इस तरह हो कि वह सीखने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करे न कि उसमें बाधक बने। सत्त मूल्याँकन में 'पोर्टफोलियो विधि' द्वारा शिक्षार्थी की अधिगम में प्रगति को दर्ज किया जाना चाहिए। भाषा मूल्याँकन को कुछ खास पाठ्यक्रमों में 'उपलब्धि' तक सीमित न रखकर भाषा-निपुणता के मापन की दिशा में मोड़ना चाहिए।
- अँग्रेज़ी भाषा परीक्षणों के सेट तैयार करने से पहले भाषा निपुणता के राष्ट्रीय मानदंड विकसित किए जाने चाहिए।

संदर्भ

अमृतावल्ली, आर. 1999, *लैंग्वेज. इज. ए डाइनामिक टेक्स्ट–ऐसेज ऑन लैंग्वेज, कॉग्नीशन एंड कम्युनिकेशन.* सी. आई.ई.एफ.एल, अक्षरा सीरीज, हैदराबाद, एलाइड पब्लिशर्स.

—— 2001, *एप्लायड रिसर्च इन लैंग्वेज़ एजुकेशन.*, सी.जे. देसवानी (संपादक), *लैंग्वेज एजुकेशन इन मल्टीलिंगुअल इंडिया* में, यूनेस्को, नयी दिल्ली, पृ॰ 210-263.

अमृतावल्ली, आर. और लक्ष्मी रामेश्वर राव, *2001*, कोपिंग विद थ्री लैंग्वेजेज इन स्कूल– फोकस ऑन मल्टीलिंगुअल रीडिंग, *हिंदू, एजुकेशनल सप्लीमेंट,* 13 मार्च.

ऑकहिल, जेन एंड रोजर बियर्ड *(संपादक),* 1999, *रीडिंग डेवलपमेंट एंड द टीचिंग ऑफ़ रीडिंग– ए साइकोलॉजिकल पर्सपेक्टिव,* ऑक्सफ़ोर्ड, यू. के. मालडन, मास., ब्लेकवेल पब्लिशर्स.

एडम्स, मैरिलीन जैगर, 1990. *बिगनिंग टू रीड, थिंकिंग एंड लर्निंग एबाउट प्रिंट, केंब्रिज.*, एम.ए., एम.आई.टी. प्रेस.

एचिसन, जीन 1988. *वर्ड्स इन द माइंड-एन इंट्रोडक्शन टू द मेंटल लेक्सिकन*, ऑक्सफोर्ड, यू.के., ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

एलड्रिज, जे लॉयड, 1995, अध्याय 1, होल *लैंग्वेज़ टीचिंग डीकोडिंग इन हॉलीस्टिक क्लॉसरूम्स,* इंगलवुड क्लीफ्स, एन.जे.– मेरील पृ. 1-16.

ऐली, वारविक और फ्रांसीस मंगूभाई, 1981, इंपेक्ट ऑफ़ ए बुक फ्लड इन ए फिजी प्राइमरी स्कूल, *स्टडीज इन साउथ पेसिफिक एजुकेशन 1,* पृ. 1-30, न्यूजीलैंड काउंसिल फॉर एजुकेशनल रिसर्च, वेलिंगटन.

ऐली, वारविक और ब्रायन कटिंग, 2001, 'द सनशाइन इन साउथ अफ्रीका' लिट्रेसी प्रोजेक्ट, *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च* 35, पृ. 193-203.

ऐली, वॉरविक एंड फ्रांसिस मंगुभाई, 1983, द इंपेक्ट ऑफ़ रीडिंग ऑन सैकंड लैंग्वेज लर्निंग. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टली* 19, पृ. 53-67.

ऐली, वारविक 2000, 'द पोटेंशियल ऑफ़ बुक फ्लड्स फॉर रेजिंग लिटरेसी लेवल्स, *इंटरनेशनल रिन्युट ऑफ़ एजुकेशन* 46 : 3/4. पृ. 233-55.

—— 2001, कॉनक्लुजन– वॉट हेव वी लर्न्ड *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च,* 35, पृ. 237-46

—— 2001, गेस्ट एडीटर्स् इंट्रोडक्शन, *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च,* 35, पृ. 127-35

कनागराजा, ए. सुरेश *(संपादक)* 2005, *रीक्लेमिंग द लोकल इन लैंग्वेज पॉलिसी एंड प्रैक्टिस,* महवाह, एन.जे.एल. अर्लबम एसोसिएट्स.

क्रिस्टल, डेविड 2004, द *लैंग्वेज़ रिवोल्यूशन,* केंब्रिज; मॉलडन, एम.ए.–पॉलिटी प्रेस.

कमिंस, जे. 1979, लिंगुएस्टिक इंटरडिपेंडेंस एंड द एजुकेशनल डेवलपमेंट ऑफ़ बाइलिंगुअल चिल्ड्रेन, *रिव्यू ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च* 49, पृ. 222-5.

——1984, *वाइलिंगुअलिज्म एंड स्पेशल एजुकेशन इशूज इन एसेसमेंट एंड पेडागॉजी,* क्लेवडन मल्टीलिंगुअल मैटर्स.

क्रशेन, स्टीफेन डी. 1985, द *इनपुट हायपोथिसिस–इशूज एंड इंप्लीकेशंस,* लंदन; न्यूयॉर्क, लांगमेन.

क्रशेन, स्टीफेन डी. और ट्रेसी डी. टर्रेल, 1983, द *नेचुरल एप्रोच–लैंग्वेज़ एक्वीजिशन इन द क्लासरूम.* हेवार्ड, सी ए, एलमनी प्रेस.

कुमार, गीता, 2005, *टीचिंग इंग्लिश–ए टीचर्स पर्सपेक्टिव*, मैसर्स. एन. एफ. जी.-इंग्लिश.

कुमारदास, श्यामला, 1993, *ए केस फॉर लर्नर-चोषेन टेक्सट्स एज इनपुट इन एडल्ट लैंग्वेज़ लर्निंग*, एम.फिल थीसिस, सी.आई.ई.एफ.एल, हैदराबाद.

कुरियन, जॉन, 2005, *नोट्स फ़ॉर द मीटिंग ऑफ़ द नेशनल फ़ोकस ग्रुप ऑन टीचिंग ऑफ़ इंग्लिश*, एंड *नोट ऑन इंट्रोडक्शन ऑफ़ इंग्लिश एट द प्राइमरी स्टेज*, मैसर्स, एन.एफ.जी.– इंग्लिश.

खान, नसीरुद्दीन, 2005, *इंट्रोडक्शन ऑफ़ इंग्लिश एज़ ए सब्जेक्ट एट द प्राइमरी लेवल*, मैसर्स, एन.एफ.जी., इंग्लिश.

गोस्वामी, उषा, 1999, फोनोलॉजिकल डेवलपमेंट एंड रीडिंग बाई एनालॉजी, एपिलिंगुएस्टीक एंड मेटालिंगुएस्टीक इशूज. जेन ऑकहिल और रोजर बियर्ड (संपादक) *रीडिंग डेवलपमेंट एंड टीचिंग ऑफ़ रीडिंग-ए. साइकोलॉजिकल पर्सपेक्टिव,* ऑक्सफोर्ड, यू.के., मॉलडन, मास, ब्लेकवेल पब्लिशर्स. पृ. 174-200.

ग्रेडोल, *डेविड,* 1997, द *फ्युचर ऑफ़ इंग्लिश,* लंदन, ब्रिटिश काउंसिल.

चॉम्स्की, नॉम, 1975, *रिफ्लेक्शंस ऑन लैंग्वेज़* फ्लेन्यूयॉर्क, पेंथॉन बुक्स.

जॉर्ज, पी.टी. 1977, ब्रिजिंगन द गैप बिटवीन स्कूल एंड कॉलेज– *रिपोर्ट ऑफ ए ट्राई-आउट ऑफ़ द स्टेयरवे रीडिंग* कोर्स. *सी.आई.ई.एफ.एल. बुलेटिन* 13 :1, पृ. 37 : 49.

जांगीड़, गीता, 2005, *लिटरेसी एंड लैंग्वेज डेवलपमेंट– ए होल लैंग्वेज पर्सपेक्टिव*, पीएच. डी. थीसिस, *सी.आई.ई. एफ.एल.*, हैदराबाद.

डेविस, पॉल और मारिओ रिनवॉलुक्री, *1988, डिक्टेशन– न्यू मैथड्स, न्यू पॉसिबिलिटीज,* कैंब्रिज हैंडबुक्स फॉर लैंग्वेज टीचर्स, सीरिज़ एडिटर पैनी उर, कैंब्रिज, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

डोवेरा, स्वप्न, 2005, *इक्लेक्टिसिज्म इन मेथेडॉलॉजी,* मैसर्स, एन.एफ.जी. इंग्लिश.

दास, बिक्रम के, 2005, *फोकस ऑन इंग्लिश.* मैसर्स, एन.एफ.जी. इंग्लिश.

नाग अरुलमणि, एस, 2000, *टाइप्स एंड मेनीफेस्टेशंस ऑफ़ लर्निंग डिफिकल्टीज इन इंडियन क्लासरूम्स, पेपर प्रजेंटेड एट द फर्स्ट ऑरिएंटेशन प्रोग्राम फॉर स्कूल टीचर्स*, नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर पब्लिक का-ऑपरेशन एंड चाइल्ड डेवलपमेंट (एन.आई.पी.सी.सी.डी), बेंगलुरु, इंडिया,

——, एस. 2005, *लैंग्वेज़ अटैनमेंट्स एंड लर्निंग ऑप्रचुनिटिज– प्वायंटर्स फॉर ए न्यू कॉरिकुलम फ्रेमवर्क*, मैसर्स, एन.एफ.जी., इंग्लिश.

नाग अरुलमणि, एस., वी. रेड्डी, और एस. बक्ले, 2003, टारगेटिंग फोनोलॉजिकल रिप्रेजेंटेशंस केन हेल्प इन द अर्ली स्टेज्स ऑफ़ रीडिंग इन ए नॉन-डॉमिनेंट लैंग्वेज़, *जर्नल ऑफ़ रिसर्च इन रीडिंग* 26-1, पृ. 49-68, स्पेशल इश्यू ऑन द डेवलपमेंट ऑफ़ लिटरेसी अमंग बाइलिंगुअल एंड मल्टीलिंगुअल चिल्ड्रेन, यू.के., ब्लेकवेल पब्लिशर्स.

प्रभु, एन.एस. 1987, *सेकंड लैंग्वेज़ पेडागॉजी*, ऑक्सफ़ोर्ड; न्यूयॉर्क, ऑक्सफ़ोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस.

फॉसेट, ए.जे. और आर.आई. निकोलसन, 1991, वॉक्युबलरी ट्रेनिंग फॉर चिल्ड्रेन विद डायलेक्सिया, *जर्नल* ऑफ़ *लर्निंग डिसेबिलिटिज* 24-6. पृ. 379-83.

फेलिक्स, पॉल, 1998, लर्निंग टू रीड इंग्लिश : द मिक्सड कोड वे- विवियन बैरी और आर्थ मेकनील (संपादक) *द्वारा पॉलिसी एंड प्रैक्टिस इन लैंग्वेज़ एजुकेशन,* हांगकांग, डिपार्टमेंट ऑफ़ कूरिकुलम स्टडीज, यूनिवर्सिटी ऑफ़ हांगकांग. पृ. 175-193.

मैथ्यू, रामा, 1997, *फाइनल रिपोर्ट (ए समरी)– सी.बी.एस.ई.-ई.एल.टी. कूरिकुलम इंप्लीमेंटेशन स्टडी*, सी.आई.ई.एफ. एल., हैदराबाद, डिपार्टमेंट ऑफ़ इवेल्युएशन.

रदरफोर्ड, विलियम ई. 1987, *सैकंड लैंग्वेज़ ग्रामर लर्निंग एंड टीचिंग,* लंदन; न्यूयॉर्क, लांगमेन.

रिपोर्ट ऑफ़ द वन-मेन कमिटी ऑन इंग्लिश इन प्राइमरी एजुकेशन, 1998, पबित्रा सरकार, गर्वमेंट ऑफ़ वेस्ट बँगाल द्वारा लिखित, अध्याय पाँच, 'द अरलियर, द बेटर' ए नेइजी स्पेस, पृ. 22-28.

वेस्ट, माइकल, 1941, *लर्निंग टू रीड ए फॉरेन लैंग्वेज़,* लॉगमेंस यू.के. (लर्निंग टू रीड ए फॉरेन लैंग्वेज़, एंड अदर एसज ऑन लैंग्वेज़ टीचिंग. (नया संस्करण) लंदन, न्यूयॉर्क, लॉगमेंस, ग्रीन 1955.

विडॉसन, एच. जी. 1978, *टीचिंग लैंग्वेज़ एज कम्युनिकेशन,* ऑक्सफ़ोर्ड, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

साहू, संध्या, 2005, ई.एल.टी. से *मेटेरियल्स एंड मैथड्स देट वर्क*, मैसर्स, एन.एफ.जी., इंग्लिश.

सक्सेना, आर. पी. 2005, *लैंग्वेज़ एंड कल्चर*, मैसर्स, एन.एफ.जी.-इंग्लिश.

स्मिट, नॉरबर्ट एंड माइकेल मेकार्थी *(संपादक)* 1997, *वॉक्युबलरी– डिस्क्रीप्शन, एक्वीजिशन एंड पेडागॉजी,* कैंब्रिज, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

स्मिट, नॉरबर्ट, 2000, *वॉक्युबलरी इन लैंग्वेज़ टीचिंग.* कैंब्रिज, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

स्नो, कैथरीन ई., एच. केनसीना, जे. डी. टेंपल, और एस. सहले. 1991, गिविंग फॉर्मल डेफिनिशंस– ए लिंगुएस्टीक ऑर मेटालिंगुएस्टीक स्कील? एलेन बालिस्टॉक (संपादक) में, *लैंग्वेज़ प्रोसेसिंग इन बाईलिंगुअल चिल्ड्रेन.* कैंब्रिज, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 90-112.

स्नो, कैथरीन ई., एम. सूसेन बनर्स, और पेग ग्रीफ़िन *(संपादकगण)* 1998, *प्रिवेंटींग रीडिंग डिफिकल्टीज इन यंग चिल्ड्रेन,* कमिटी ऑन द प्रिवेंशन ऑफ़ रीडिंग डिफिकल्टीज इन यंग चिल्ड्रेन, कमिशन ऑन द बिहेवीयरल एंड सोशल साइंसेस एंड एजुकेशन, नेशनल रिसर्च काउंसिल, वॉशिंगटन डीसी, नेशनल एकेडमी प्रेस.

स्टेनॉविच, कीथ ई. 2000, *प्रोग्रेस इन अंडरस्टैंडिंग रीडिंग–साइंटिफिक फाउंडेशंस एंड न्यू फ्रंटियर्स,* न्यूयॉर्क, गिलफोर्ड प्रेस.

सुनवानी, विजय कुमार, 2005, द *इंग्लिश लैंग्वेज़ एंड इंडियन कल्चर,* मैसर्स., एन.एफ.जी., इंग्लिश.

शामला, एस.के. 2005, *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर स्कूल एजुकेशन,* मैसर्स, एन.एफ.जी., इंग्लिश.

हडलसन, सराह, 1994, लिटरेसी डेवलपमेंट ऑफ़ सैकंड लैंग्वेज़ चिल्ड्रेन. इन फ्रेड जेनेसी (संपादक) *एजुकेटिंग सैकंड लैंग्वेज चिल्ड्रेन, द होल चाइल्ड, द होल कूरिकुलम, द होल कम्युनिटी,* पृ. 129-158 कैंब्रिज, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

शब्दकोश/संदर्भ सामग्री

अमृतावल्ली, आर. 1999, डिक्शनरीज आर अनप्रेडिक्टेवल, *इंग्लिश लैंग्वेज़ टीचिंग जर्नल* 53-4. पृ. 262-69.

अमृतावल्ली, आर., ए. जाना, और विजया, 2003, स्टूडेंट्स अंडरस्टैडिंग ऑफ़ डिक्शनरी इंट्रीज– ए. स्टडी विद रिस्पेक्ट टु फोर लर्नस डिक्शनरीज *इंडियन जर्नल ऑफ एप्लाइड लिंगुएस्टीक्स* 29 : 1, पृ. 5-20.

दास, बिक्रम के. 2004, वर्ड मास्टर– *लर्नस डिक्शनरी ऑफ़ मॉडर्न इंग्लिश,* हैदराबाद- ऑरिएंट लांगमेन.

फिशर, उटे, 1994, लर्निंग वर्ड्स फ्रॉम कंटेक्स्टर एंड डिक्शनरज– एन एक्सपेरिमेंटल कंपरीजन, एप्लाइड साइकोलिंगुस्टिक्स 15 : 4, पृ. 551-74.

डायस्लेक्सिया संबंधी सामग्री

थॉमसन, एम.ई. और ई.जे. वॉटकिंस, 1993, *डायस्लेरक्सिया– ए टीचिंग हैंडबुक,* लंदन, हुर्र पब्लिशर्स.

माइल्स, टी.आर. 1995, डायस्लेक्सिया–द करंट स्टेट्स ऑफ़ द टर्म, II, *चाइल्ड लैंग्वेज़ टीचिंग एंड थेरेपी* 2:1, पृ. 23-33.

वेल्यूटिनो, फ्रैंक, आर. 1979, *डायस्लेक्सिया– थ्योरी एंड रिसर्च,* कैंब्रिज, मास., एम.आई.टी. प्रेस.

सामग्री-समृद्ध प्रणाली

अमृतावल्ली, आर. 1995, मीडिया एंड लैंग्वेज़ एक्वीजिशन, आर. के. अग्निहोत्री और ए. एल. खन्ना (संपादकगण), *इंग्लिश लैंग्वेज़ टीचिंग इन इंडिया– इशूज एंड इनोवेशंस,* पृ. 181-86, नयी दिल्ली, सेज़.

क्रशेन, स्टीफेन, 1989, वी एक्वॉयर वॉक्युबलरी एंड स्पेलिंग बाई रीडिंग– एडिशनल एविडेंस फॉर द इनपुट हॉयपोथिसिस, *मॉडर्न लैंग्वेज़ जर्नल,* 73 : 4, पृ. 440-64.

क्रशेन, स्टीफ़न, 1983, द डिन इन द हेड– इनपुट एंड द लैंग्वेज़ एक्वीजिशन डिवाइस, जॉन डब्ल्यू. ऑलर, जू. और पेट्रीसिया ए. रिचर्ड-अमेटो (संपादकगण), *मेथड्स दैट वर्क– ए स्मॉरगेस्बॉर्ड ऑफ़ आइडियाज फॉर लैंग्वेज़* टीचर्स, पृ. 295-301, रॉली, मास– न्यूबरी हाउस पब्लिशर्स.

टर्रेल, ट्रेसी डी, 1983, द नेचुरल एप्रॉच टु लैंग्वेज़ टीचिंग– एन अपडेट, जॉन डब्ल्यू. ऑलर, जू. और पेट्रीसिया ए. रिचर्ड-अमेटो (संपादकगण), *मेथड्स देट वर्क– ए स्मॉरगेस्बॉर्ड ऑफ़ आइडियाज फॉर लैंग्वेज़ टीचर्स,* पृ. 267-283, रॉली, मास.- न्यूबरी हाउस पब्लिशर्स.

न्यूमार्क, लिओनार्ड, 1983, हाउ नॉट टू इंटरफेयर विद लैंग्वेज लर्निंग, जॉन डब्ल्यू. ओलर, जू. और पेट्रीसिया ए. रिचर्ड-अमेटो (संपादक), *मेथड्स दैट वर्क– ए स्मॉरगेस्बॉर्ड ऑफ़ आइडियाज फॉर लैंग्वेज़ टीचर्स,* पृ. 49-55, रॉली, मास.–न्यूबरी हाउस पब्लिशर्स, (रिप्रिंटेड फ्रॉम इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ अमेरिकन लिंगुएस्टीक, 32-1.2. 1966).

प्रभु, एन. एस. 1987, *सैकंड लैंग्वेज़ पेडागॉजी ऑक्सफोर्ड,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

—— 1998, *टीचिंग इज़ एट मोस्ट होपिंग फॉर द बेस्ट,* पेपर डेलिवर्ड एट द रीज़नल इंग्लिश लैंग्वेज़ सेंटर सेमिनार, साउथ इस्ट एशियन मिनिस्ट्रीज़ ऑफ़ एजुकेशन ऑर्गनाइज़ेशन, सिंगापुर.

मेकनामरा, जॉन, 1983, नर्सरीज, स्ट्रीट्स, एंड क्लासरूम्स– सम कंपेरिजन्स एंड डिडक्शंस, इन जॉन डब्ल्यू. ऑलर, जू. और पेट्रीसिया ए. रिचर्ड-अमेटो (संपादकगण) *मेथड्स देट वर्क : ए स्मॉरगेस्बॉर्ड ऑफ़ आइडियाज फॉर लैंग्वेज़ टीचर्स,* पृ. 259-266, रॉली, मास– न्यूबरी हाउस पब्लिशर्स.

प्रामाणिक सामग्री

स्ट्रीवेंस, पीटर, 1987, इंटरएक्शन आउटसाइड द क्लासरूम– यूज़िंग द कम्युनिटी. विल्गा एम. रिवर्स (संपादक), 1987, *इंटरएक्टीव लैंग्वेज़ टीचिंग,* पृ. 170-176, न्यूयॉर्क- कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

माले, एलेन, 1987, पॉइट्री एंड सांग एज़ इफेक्टिव लैंग्वेज लर्निंग एक्टीविटिज़, विल्गा एम. रिवर्स (संपादक) में 1987, *इंटरएक्टिव लैंग्वेज़ टीचिंग,* पृ. 93-109, न्यूयॉर्क- केंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

कक्षा-कक्ष सामग्री

रमन, उषा, 2003, *ए पॉट ऑफ़ लाइट,* बिग बुक्स, हैदराबाद, स्पार्क इंडिया.

राव, लक्ष्मी रामेश्वर, 2005, *स्पार्क जियोग्राफी,* हैदराबाद, स्पार्क इंडिया.

——2003, *स्पार्क जूनियर जियोग्राफी,* हैदराबाद, स्पार्क इंडिया.

शील, 2003, *अंडर द बेड*, बिग बुक्स, हैदराबाद- स्पार्क इंडिया.

संदर्भ पुस्तकें

टिक्कू, एम. एल. 2004, *ई.एल.टी. इन इंडिया,* नयी दिल्ली, ऑरिएंट लांगमेन.

होव, माइकल जे. ए. 1984, *ए टीचर्स गाइड टु द साइकोलॉजी ऑफ़ लर्निंग,* ऑक्सफ़ोर्ड, इंलैंड; न्यू यार्क, एन.वाई.बी. ब्लेकवेल.